इतिवुत्तक

[मूल पालि का अविकल हिन्दी अनुवाद]

अनुवादक

भिक्षु धर्मरक्षित

प्रकाशक

महाबोधि सभा,

सारनाथ, बनारस

प्रथम संस्करण] बुद्धाब्द २४९९ [मूल्य ।।।)

प्रकाशक
भिक्षु एम० संघरत्न
मंत्री,
महाबोधि सभा, सारनाथ, बनारस

प्रथम-संस्करण
बुद्धाब्द २४९९
सन् १९५६

मुद्रक
याज्ञवल्क्य
ममता प्रेस, कबीरचौरा, बनारस

समर्पण

जो बचपन से ही बुद्धमूर्ति की महिमा सुनाया करते थे,
जिन्हें तथागत की परिनिर्वाण-भूमि बहुत प्यारी
थी, जो अपने अनुज को भिक्षु-रूप में
देखकर आनन्द-विभोर हो उठते थे और
जिन्होंने माता-पिता को भाग्यशाली
कहते हुए अपनी आँखें सदा
के लिये मूँद ली थीं,
उन्हीं अग्रज श्री
तपसी सिंह
की स्मृति
में

'अप्पमादेन सम्पादेथ'

आमुख

नाम

'इतिवुत्तक' त्रिपिटक के अन्तर्गत सुत्तन्त पिटक के खुद्दक निकाय का चौथा ग्रन्थ है, जिसका शाब्दिक अर्थ है—'ऐसा कहा गया'। मैंने पहले सोचा था कि इसका हिन्दी-करण करके 'बुद्ध ने ऐसा कहा' अथवा 'बुद्धवाणी' नाम रख दूँ, किन्तु बाद में इस विचार को छोड़ दिया और परम्परागत नाम को ही रखना पसन्द किया। श्री जस्टिन हर्टले मूर एम. ए., पी. एच. डी. ने कोलम्बिया विश्वविद्यालय की ओर से सन् १९०८ में प्रकाशित अपने 'इतिवुत्तक' के अनुवाद-ग्रन्थ का नाम बुद्धवाणी (Sayings of Buddha) ही रखा है।

शैली

इस ग्रन्थ में चार निपात हैं, जिनमें पहला, दूसरा और तीसरा क्रमशः ३, २ और ५ वर्गों में बँटे हुए हैं। चौथे निपात में वर्ग-विभाजन नहीं है। इतिवुत्तक के निपात अंगुत्तर निकाय की भाँति वर्णित विषय की बढ़ती संख्या के क्रम से रखे हुए सुत्तों वाले हैं। इस ग्रन्थ में आये हुए कुल सुत्तों की संख्या ११२ है।

इस ग्रन्थ में भगवान् की छोटी-छोटी उक्तियों का संग्रह है, जो 'वुत्तं हेतं भगवता, वुत्तमरहतातिं मे सुतं' (= भगवान् ने यह कहा, अर्हत् ने यह कहा—ऐसा मैंने सुना) से प्रारम्भ होता है और अन्त में

'अयम्पि अत्थो वुत्तो भगवता इति मे सुतन्ति' (= यह भी बात भगवान् द्वारा कही गई—ऐसा मैंने सुना) वाक्य के साथ सूत्र समाप्त होते हैं। ऐसा जान पड़ता है कि मानो इन उक्तियों की सच्चाई को प्रगट करने के लिए बार-बार विश्वास दिलाया गया है कि ये भगवान् बुद्ध द्वारा ही कही गई हैं।

यह गद्य-पद्य-मय ग्रन्थ बड़ा ही सुन्दर और हृदयग्राही है। इसकी शैली एवं विषयों का क्रम ऐसा है, जो याद करने वालों तथा भाणवार क्रम से पाठ करने वालों के लिए बड़ा उपयोगी है। पहले परिच्छेद (= निपात) में एक-एक बातों का वर्णन है, दूसरे में दो-दो, तीसरे में तीन-तीन और चौथे में चार-चार। उदाहरण-स्वरूप पहले परिच्छेद में कहा गया है:—

"ऐसा मैंने सुना, भगवान् ने यह कहा – 'भिक्षुओ! एक बात को छोड़ो। मैं तुम्हारे अनागामी होने का जामिन होता हूँ। किस एक बात को? भिक्षुओ! लोभ—इस एक बात को छोड़ो। मैं तुम्हारे अनागामी होने का जामिन होता हूँ'।"

भगवान् ने यह बात कही। वहाँ यह इस प्रकार कहा जाता है—

"जिस लोभ से लोभी होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस लोभ को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"

यह भी बात भगवान् ने कही। ऐसा मैंने सुना।

दूसरे परिच्छेद में :—

"भिक्षुओ! दो बातों से युक्त व्यक्ति लाये हुए को डालने के समान नरक में पड़ता है। किन दो? बुरे शील और बुरी दृष्टि।"....

तीसरे परिच्छेद में :—

"भिक्षुओ ! ये तीन पाप के मूल हैं। कौन तीन ? लोभ पाप का मूल है, द्वेष पाप का मूल है, मोह पाप का मूल है। भिक्षुओ ! ये तीन पाप के मूल हैं।"...

"अपने भीतर उत्पन्न लोभ, द्वेष और मोह पाप-चित्तवाले व्यक्ति की वैसे ही हिंसा करते हैं, जैसे कि केले के वृक्ष की उसका फल।"

चौथे परिच्छेद में :—

"भिक्षुओ ! ये चार अल्प, सुलभ और निर्दोष हैं। कौन चार ? भिक्षुओ ! पांशुकूल (=मार्ग आदि में गिरे हुए वस्त्र-खण्डों को सीकर बनाया हुआ) चीवर, भिक्षा माँग कर खाना, वृक्ष-मूल (=पेड़ों के नीचे रहना), पूतिमूत्र (=गो-मूत्र) भिक्षुओ ! जब भिक्षु अल्प और सुलभ से सन्तुष्ट होता है, तो उसका यह एक श्रामण्य-अंग होता है—ऐसा मैं कहता हूँ।"....

"जो निर्दोष, अल्प और सुलभ से सन्तुष्ट है, शयन-आसन, चीवर और खाने-पीने के लिए जिसे चित्त में परेशानी नहीं है, जो दिशाओं में नहीं टकराता (अर्थात् सन्तुष्ट होता है), तो श्रमण-भाव के अनुरूप जो धर्म बतलाये गये हैं, वे उस सन्तुष्ट अप्रमादी भिक्षु को प्राप्त होते हैं।"

इस प्रकार परिच्छेदों में वर्णित एक-एक, दो-दो, तीन-तीन और चार-चार बातों का तारतम्य अपने-अपने स्थान पर बना रहता है और भाणक अथवा याद करने वाला व्यक्ति मजे में उनका पाठ करता चला जाता है। प्राचीन काल में सम्पूर्ण त्रिपिटक भाणक-परम्परा से कंठस्थ किया जाता था और भाणक-परम्परा के कारण ही वह भिक्षुओं को कंठस्थ रहा। संगीतिकारक महास्थविरों ने भाणकों की सुविधा के अनुसार ही इस पूरे ग्रन्थ को इस प्रकार के परिच्छेदों (=निपातों) में

विभक्त किया। आज हम जो भी सोचें या कहें, किन्तु इस वर्गीकरण का एक विशेष महत्व है। इसीलिये तो अंगुत्तर-निकाय-जैसे बड़े ग्रन्थ को भी 'इतिवुत्तक' की ही भाँति ग्यारह निपातों में विभक्त किया गया है।

समानता

'इतिवुत्तक' में आये हुए अनेक सूत्र अंगुत्तर निकाय, संयुत्त-निकाय, धम्मपद और पुग्गलपञ्ञत्ति में मिलते हैं। यथा:—

इतिवुत्तक		अंगुत्तर निकाय
१. पसाद सुत्त ३.५.१	[तीन अग्रप्रसाद]	पसाद सुत्त ४.४.४
२. चत्तारि सुत्त ४.२	[चार सुलभ चीज़ें]	चत्तारि सुत्त ४.३.७
३. तण्हा सुत्त ४.६	[तृष्णा से ही चक्कर]	तण्हा सुत्त ४.१.९
४. सम्पन्न सुत्त ४.१२	[शील से युक्त होकर विहरो]	सम्पन्न सुत्त ४.[illegible].२
५. लोक सुत्त ४.१३	['बुद्ध' तथागत क्यों कहलाते हैं?]	लोक सुत्त ४.३.३
६ चर सुत्त ४.११	[निर्वाण कौन पाता है ?]	चर सुत्त ४.२.१
७. पुरिम्प सुत्त ४.१०	[पार गया व्यक्ति]	पुरिम्प सुत्त ४.१.३
८. कुहना सुत्त ४.९	[वे बुद्ध को चाहने वाले हैं]	कुहना सुत्त ४.३.६
९. ब्रह्म सुत्त ४.७	[माता-पिता ही ब्रह्मा हैं]	ब्रह्म सुत्त ३.४.१ और ४.२.३
१०. इन्द्रिय सुत्त ३.२.३	[तीन इन्द्रियाँ]	सेख सुत्त ३.४.५
११. दान सुत्त ३.५.६	[धर्मदान श्रेष्ठ है]	दान सुत्त २.३.२.१
१२. धम्म सुत्त ३.५.१०	[त्रैविद्य ब्राह्मण कौन है ?]	तेविज्ज सुत्त ३.१.८
१३. जान सुत्त ४.३	[आश्रवों का क्षय कैसे ?]	सेख सुत्त [illegible].४.५

इतिवुत्तक		संयुत्त निकाय
१४. मूलधातु सुत्त ३.१.१	[पाप की जड़]	पुरिस सुत्त ३.१.२
१५. अद्धा सुत्त ३.२.४	[तीन काल]	अद्धा सुत्त १.२.१८
१६. अवुट्ठिक सुत्त ३.२.६	तीन प्रकार के व्यक्ति]	इस्सत्थ सुत्त ३.३.४
इतिवुत्तक		**धम्मपद**
१७. धम्म सुत्त ३.५.१०	[त्रैविद्य ब्राह्मण कौन है ?]	गाथा ४२३
१८. तण्हा सुत्त ४.६	[तृष्णा से ही चक्कर]	गाथा ३५२
इतिवुत्तक		**पुग्गलपञ्ञत्ति**
१९. सील सुत्त ४.५	[उनका दर्शन भी लाभदायक है]	चतुक्क निद्देसो ४.२३

अंगुत्तर निकाय के कतिपय सूत्र तो अक्षरशः इतिवुत्तक से मिलते हैं, किन्तु अन्य ग्रन्थों के सूत्रों एवं गाथाओं के कुछ अंश मात्र ही ।

त्रिपिटक में स्थान

ऊपर मैंने लिखा है कि यह खुद्दक निकाय का चौथा ग्रन्थ है, किन्तु जो लोग त्रिपिटक से परिचित नहीं हैं, उन्हें समझने में कठिनाई होगी । भगवान् बुद्ध के सम्पूर्ण उपदेशों के संकलन का नाम 'त्रिपिटक' (तिपिटक) है । त्रिपिटक का अर्थ है तीन पिटारी अथवा तीन मंजूषा । भगवान् बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात् जब राजगृह में प्रथम संगीति हुई, तब संगीति-कारक अर्हत् भिक्षुओं ने सम्पूर्ण बुद्ध-वचन का संगायन कर उन्हें तीन भागों में विभक्त कर दिया और उसका नाम त्रिपिटक रखा । त्रिपिटक में ये तीन पिटक हैं—सुत्त-पिटक, विनय-पिटक और अभिधम्म-पिटक । इनमें सुत्त-पिटक दीघ-निकाय, मज्झिम-निकाय, संयुत्त निकाय, अंगुत्तर निकाय और खुद्दक निकाय—इन पाँच निकायों में विभक्त है । खुद्दक निकाय में पन्द्रह ग्रन्थ सम्मिलित हैं—खुद्दकपाठ, धम्मपद, उदान,

इतिवुत्तक, सुत्तनिपात, विमानवत्थु, पेतवत्थु, थेर-गाथा, थेरी-गाथा, जातक, निद्देस, पटिसम्भिदामग्ग, अपदान, बुद्धवंस और चरियापिटक।

विनय-पिटक में पाँच ग्रंथ हैं—पाराजिका, पाचित्तिय, महावग्ग, चुल्लवग्ग और परिवार।

अभिधम्म-पिटक में सात ग्रन्थ हैं—धम्मसंगणी, विभंग, धातुकथा, पुग्गलपञ्ञत्ति, कथावत्थु, यमक और पट्ठान।

इस तरह इतिवुत्तक त्रिपिटक के सुत्त-पिटक के खुद्दक-निकाय के पन्द्रह ग्रन्थों में से एक है।

महत्व

इस ग्रन्थ का पालि बौद्ध साहित्य में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी वर्णन शैली अपनी विशिष्टता के कारण ही बौद्ध धर्म के नव अंगों में से एक मानी जाती है। सम्पूर्ण त्रिपिटक अंगों के स्वरूप से नव भागों में विभक्त किया जाता है, जिसे 'नवांग बुद्ध वचन' कहते हैं। यह त्रिपिटक का प्राचीन वर्गीकरण है। भगवान् बुद्ध के समय में यही वर्गीकरण प्रचलित था। भगवान् ने स्वयं मज्झिम निकाय के अलगद्दूपम सुत्त (२२) में कहा है—"यहाँ भिक्षुओ! कोई-कोई मोघ पुरुष सुत्त, गेय, व्याकरण, गाथा, उदान, इतिवुत्तक, जातक, अद्भुत धर्म और वेदल्य को धारण करते हैं। वे उन धर्मों को धारण करते हुए भी उनके अर्थ को प्रज्ञा से परखते नहीं हैं।"

'इतिवुत्तक' ने भगवान् की विशेष एवं लघु उक्तियों के लिए ही नवांग में महत्वपूर्ण स्थान पाया है। इसके सूत्र तथा उक्तियाँ बड़ी सुन्दर और मार्मिक हैं। इनमें लोभ, द्वेष, मोह, क्रोध, मान, शील, मैत्री, समाधि, प्रज्ञा, निर्वाण आदि के विषय में जो बुद्ध-वचन संग्रहीत हैं, वे व्यक्ति को ऊपर उठाने वाले तथा मुक्ति की ओर ले जाने वाले हैं। जैसे, भगवान् लोभ के विषय में कहते हैं:—

•

"भिक्षुओ! एक बात को छोड़ो। मैं तुम्हारे अनागामी होने का जामिन होता हूं। किस एक बात को? भिक्षुओ! लोभ—इस एक बात को छोड़ो। "

महाकारुणिक भगवान् ने स्वयं अपने को जामिन बना कर कैसे मार्मिक वचन कहे हैं! इसी प्रकार इस ग्रन्थ में आये हुए सभी सुत्त तथागत की अनुपम शिक्षा से पूर्ण हैं।

कुछ दिनों पूर्व मैंने जिज्ञासुओं के बार-बार के आग्रह पर इतिवुत्तक के अविकल अनुवाद को 'धर्मदूत' में प्रकाशित किया था, किन्तु उसके पश्चात् भी लोगों का आग्रह बना रहा कि इसे ग्रन्थ-रूप में प्रकाशित किया जाय। यह उनके आग्रह का परिणाम है।

मैंने ग्रन्थ में सुत्तों की संख्या तो दी है, किन्तु शीर्षक विषयानुसार रख दिये हैं, जिससे पाठक को अरुचि न उत्पन्न हो। अन्त में पारिभाषिक एवं गम्भीर शब्दों की बोधिनी भी दे दी है।

सारनाथ, बनारस
कार्तिक पूर्णिमा
बुद्धाब्द २४९९

—भिक्षु धर्मरक्षित

विषय-सूची

पहला परिच्छेद

पहला वर्ग

दूसरा वर्ग

तीसरा वर्ग

दूसरा परिच्छेद

पहला वर्ग

दूसरा वर्ग

तीसरा परिच्छेद

पहला वर्ग

दूसरा वर्ग

तीसरा वर्ग

चौथा वर्ग

पाँचवाँ वर्ग

चौथा परिच्छेद

पृष्ठ

इतिवुत्तक

पहला निपात

पहला वर्ग

१. राग

ऐसा मैंने सुना, भगवान् ने यह कहा—भिक्षुओ ! एक बात को छोड़ो । मैं तुम्हारे अनागामी[1] होने का जामिन होता हूँ ।❀ किस एक बात को ? भिक्षुओ ! लोभ—इस एक बात को छोड़ो । मैं तुम्हारे अनागामी होने का जामिन होता हूँ ।

भगवान् ने यह बात कही । वहाँ यह इस प्रकार कहा जाता है—

"जिस लोभ से लोभी होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस लोभ को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं । वे उसे छोड़कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते ।"

यह भी बात भगवान् ने कही । ऐसा मैंने सुना ।

२. द्वेष

...भिक्षुओ ! एक बात को छोड़ो । मैं तुम्हारे अनागामी होने का

❀ जिन शब्दों के साथ १, २ आदि अंक मुद्रित हैं, उनकी व्याख्या 'बोधिनी' में की गई है । कृपया ग्रन्थ के अन्तिम भाग में देखें ।

जामिन होता हूँ। किस एक बात को ? भिक्षुओ ! द्वेष—इस एक बात को छोड़ो। ....

"जिस द्वेष से बुरे मनवाले होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस द्वेष को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़ कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते"........

३. मोह

भिक्षुओ ! एक बात को छोड़ो। मैं तुम्हारे अनागामी होने का जामिन होता हूँ। किस एक बात को ? भिक्षुओ ! मोह—इस एक बात को छोड़ो। ..

"जिस मोह से मूढ़ होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस मोह को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"........

४. क्रोध

.... भिक्षुओ ! एक बात को छोड़ो।...किस एक बात को भिक्षुओ ! क्रोध—इस एक बात को छोड़ो .

"जिस क्रोध से क्रोधी होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस क्रोध को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"....

५. अमरख

........भिक्षुओ ! एक बात को छोड़ो। .. किस एक बात को ? भिक्षुओ ! म्रच (= आमर्ष, माख, अमरख)—इस एक बात को छोड़ो।...

"जिस अमरख से अमरखी होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं,

उस अमरत्व को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"

६. घमंड

भिक्षुओ ! एक बात को छोड़ो।....किस एक बात को ? भिक्षुओ ! मान(= घमण्ड)—इस एक बात को छोड़ो।...

"जिस मान से मत्त होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस मान को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"

७. सब का त्याग

भिक्षुओ ! सभी (अच्छी बुरी बातों) को भली प्रकार न जानते हुए, उनसे मन को न हटाते हुए, उन्हें न छोड़ते हुए (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ नहीं है। भिक्षुओ ! सभी (अच्छी-बुरी बातों) को भली प्रकार जानते हुए, उनसे मन को हटाते हुए, उन्हें छोड़ते हुए ही (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ हो सकता है।...

"जो सबको सब प्रकार से जानकर सभी बातों में राग नहीं करता है, वही सबको जानते हुए सारे दुःख का अतिक्रमण कर गया है।"

८. अभिमान का त्याग

भिक्षुओ ! मान को भली प्रकार न जानते हुए, उससे मन को न हटाते हुए, उसे न त्यागते हुए (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ नहीं है। भिक्षुओ ! मान को भली प्रकार जानते हुए, उससे मन को हटाते हुए, उसे छोड़ते हुए ही (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ हो सकता है।...

"मान से युक्त, मान से बँधे हुए यह प्राणी संसार में लगा हुआ है। जो मान को नहीं छोड़ते हैं वे पुनः संसार में आते हैं किन्तु जो मान को छोड़, मान को खत्म कर विमुक्त हो गए हैं, वे मान के बन्धन को तोड़ने वाले सारे दुःख का अतिक्रमण कर गये हैं।"

९. लोभ का त्याग

भिक्षुओ ! लोभ को भली प्रकार न जानते हुए, उससे मन को न हटाते हुए, उसे न त्यागते हुए (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ नहीं है। भिक्षुओ ! लोभ को भली प्रकार जानते हुए, उससे मन को हटाते हुए, उसे छोड़ते हुए ही (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ हो सकता है।...

"जिस लोभ से लोभी होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस लोभ को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़ कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"

१०. द्वेष का त्याग

भिक्षुओ ! द्वेष को भली प्रकार न जानते हुए, उससे मन को न हटाते हुए, उसे न छोड़ते हुए, (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ नहीं है। भिक्षुओ ! द्वेष को भली प्रकार जानते हुए, उससे चित्त को हटाते हुए, उसे छोड़ते हुए ही (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ हो सकता है।

"जिस द्वेष से बुरे मनवाला होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस द्वेष को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"

दूसरा वर्ग

१. मोह का त्याग

भिक्षुओ ! मोह को भली प्रकार न जानते हुए, उससे मन को न हटाते हुए, उसे न छोड़ते हुए (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ नहीं है। भिक्षुओ ! मोह को भली प्रकार जानते हुए, उससे चित्त को हटाते हुए, उसे छोड़ते हुए ही (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ हो सकता है।....

"जिस मोह से मूढ़ होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस मोह को योगी लोग भली प्रकार जान कर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़ कर फिर कभी इस लोक में नहीं आते।"

२. क्रोध का त्याग

भिक्षुओ ! क्रोध को भली प्रकार न जानते हुए, उससे चित्त को न हटाते हुए, उसे न छोड़ते हुए (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ नहीं है। भिक्षुओ ! क्रोध को भली प्रकार जानते हुए, उससे चित्त को हटाते हुए, उसे छोड़ते हुए ही (कोई भी आदमी) दुःख को खत्म करने में समर्थ हो सकता है।....

"जिस क्रोध से क्रोधी होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस क्रोध को योगी लोग भली प्रकार जानकर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"

३. अमरख का त्याग

भिक्षुओ ! अमरख (= माख) को भली प्रकार न जानते हुए, उससे मन को न हटाते हुए, उसे न छोड़ते हुए (कोई भी आदमी दुःख)

को खत्म करने में समर्थ नहीं है। भिक्षुओ ! अमरख को भली प्रकार जानते हुए, उससे मन को हटाते हुए, उसे त्यागते हुए ही (कोई भी व्यक्ति) दुःख को खत्म करने में समर्थ हो सकता है।

"जिस अमरख से अमरखी होकर प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं, उस अमरख को योगी लोग भली प्रकार जान कर छोड़ देते हैं। वे उसे छोड़ कर फिर कभी इस संसार में नहीं आते।"

४. सबसे बड़ा ढक्कन

भिक्षुओ ! मैं दूसरे एक भी (ऐसे) ढक्कन को नहीं देखता कि जिस ढक्कन से ढँके हुए प्राणी चिरकाल तक दौड़ते और चक्कर काटते हैं, जो कि भिक्षुओ ! यह अविद्या का ढक्कन है। भिक्षुओ ! अविद्या के ढक्कन से ढँके हुए प्राणी चिरकाल तक दौड़ते और चक्कर काटते हैं।....

"दूसरा एक भी धर्म ऐसा नहीं है जिससे कि ढँके हुए प्राणी रातों दिन चक्कर काटते हैं, जैसा कि मोह से ढँके हुए। जो मोह को छोड़, (अविद्या रूपी) अन्धकार के समूह को नाश कर दिये हैं, वे फिर चक्कर नहीं काटते, (क्योंकि उसका) हेतु ही नहीं है।"

५. सबसे बड़ा बन्धन

भिक्षुओ ! मैं दूसरे एक भी ऐसे बन्धन को नहीं देखता कि जिस बन्धन से बँधे हुए प्राणी चिरकाल तक दौड़ते और चक्कर काटते हैं, जो कि भिक्षुओ ! यह तृष्णा का बन्धन है। भिक्षुओ ! तृष्णा के बन्धन से ही बँधे हुए प्राणी चिरकाल तक दौड़ते और चक्कर काटते हैं।...

"तृष्णा की दोस्ती वाला पुरुष चिरकाल से चक्कर काट रहा है। उत्पन्न होता और मरता है। वह संसार का अतिक्रमण नहीं कर पाता। तृष्णा दुःख को पैदा करने वाली है—इस प्रकार इसके दोषों को जानकर भिक्षु तृष्णा-रहित, आसक्ति को छोड़, स्मृतिमान हो विचरण करे।"

६. उचित मनन

भिक्षुओ ! अर्हत्व को न प्राप्त हुए शैक्ष्य[2] भिक्षु के लिए, जोकि सर्वोत्तम कल्याण (= अर्हत्व) की कामना करते विहरता है, भीतरी अंग के तौर पर दूसरे एक अंग को भी ऐसा अधिक लाभ दायक नहीं देखता, जैसा कि भिक्षुओ ! यह उचित-मनन करना है। भिक्षुओ ! उचित-मनन करते पाप को छोड़ता है, पुण्य को बढ़ाता है। ...

"शैक्ष्य भिक्षु को उत्तम अर्थ (= अर्हत्व) की प्राप्ति के लिए उचित-मनन के समान अधिक लाभदायक दूसरा कोई धर्म नहीं है। उचित रूप से प्रयत्न करते भिक्षु दुःख-क्षय (= निर्वाण) को प्राप्त कर लेता है।"

७. अच्छी मिताई

भिक्षुओ ! अर्हत्व को न प्राप्त हुए शैक्ष्य भिक्षु के लिए, जो कि सर्वोत्तम कल्याण (= अर्हत्व) की कामना करते विहरता है, बाहरी अंग के तौर पर दूसरे एक अंग को भी ऐसा अधिक लाभदायक नहीं देखता जैसा कि भिक्षुओ ! अच्छी मिताई। भिक्षुओ ! अच्छी मिताई वाला भिक्षु पाप को छोड़ता है, पुण्य को बढ़ाता है। ...

"जो भिक्षु अच्छी मिताई वाला; आज्ञाकारी, गौरवयुक्त, मित्रों की बात मानने वाला, ज्ञान और स्मृति से युक्त होता है, वह क्रमशः सब बन्धनों को नाश कर देता है।"

८. संघ की फूट

भिक्षुओ ! लोक में एक बात पैदा होती हुई बहुत-से लोगों के अहित, दुःख और अनर्थ के लिए पैदा होती है, उससे देव-मनुष्यों को अहित होता है, दुःख मिलता है। कौन-सी एक बात ! संघ की फूट। भिक्षुओ !

संघ की फूट होने पर परस्पर झगड़े होते हैं, परस्पर डांटना और गाली देनी होती है तथा परस्पर बिलगाव करने होते हैं। ऐसा होने पर अ-श्रद्धालु लोग श्रद्धा नहीं करते और श्रद्धालु लोगों में से भी किसी-किसी का मन फिर जाता है।....

"संघ की फूट कराने वाला कल्प-भर नरक में रहने वाला होता है। फूट डालने में लीन, अधार्मिक व्यक्ति निर्वाण के प्राप्ति से वंचित होता है। वह मिलकर रहने वाले संघ को फोड़कर कल्प भर नरक में पकता है।"

९. संघ का मेल

भिक्षुओ! लोक में एक बात पैदा होती हुई बहुत से लोगों के हित सुख और अर्थ के लिए पैदा होती है उससे देव मनुष्यों की भलाई होती है, सुख मिलता है। कौन-सी एक बात? संघ का मेल। भिक्षुओ! संघ के मिलकर रहने पर न परस्पर झगड़े होते हैं, न परस्पर डांटना और गाली देनी होती है तथा न परस्पर बिलगाव होता है। ऐसा होने पर अश्रद्धालु लोग श्रद्धा करते हैं और श्रद्धालुओं की श्रद्धा बढ़ती है।....

"संघ का मिलकर रहना सुखदायक है। मेल बढ़ाने वाला, मेल करने में लीन, धार्मिक व्यक्ति निर्वाण से वंचित नहीं होता। वह संघ को मिलाकर कल्प भर स्वर्ग में आनन्द करता है।"

१०. बुरा चित्त

भिक्षुओ! मैं यहां किसी बुरे चित्तवाले व्यक्ति के चित्त को अपने चित्त से समझ कर ऐसा जानता हूँ—यदि यह व्यक्ति इस समय मरेगा तो लाये हुए को रखने के समान नरक में उत्पन्न होगा। सो किस कारण? भिक्षुओ इसका चित्त बुरा है। भिक्षुओ! इसका चित्त बुरा होने के कारण इस प्रकार कोई प्राणी शरीर छूटने पर....नरक में पैदा होता है....

"किसी व्यक्ति को बुरे चित्तवाला जानकर भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं के पास यह बात कही—यदि यह व्यक्ति इस समय मरेगा तो नरक में पैदा होगा, क्योंकि इसका चित्त बुरा है। जैसे किसी चीज को लाकर डाल दे, ऐसे ही यह नरक में उत्पन्न होगा। प्राणी चित्त बुरा होने के के कारण दुर्गति को प्राप्त होते हैं।"

तीसरा वर्ग

१. पवित्र चित्त

भिक्षुओ ! मैं यहाँ किसी पवित्र चित्त वाले व्यक्ति के चित्त को अपने चित्त से समझ कर ऐसा जानता हूँ—यदि यह व्यक्ति इस समय मरेगा, तो लाये हुये को रखने के समान स्वर्ग में पैदा होगा। सो किस कारण ? भिक्षुओ ! इसका चित्त पवित्र है। भिक्षुओ ! चित्त पवित्र होने के कारण इस प्रकार कोई-कोई प्राणी शरीर छूटने पर....स्वर्ग लोक में पैदा होते हैं। ..

"किसी व्यक्ति को पवित्र चित्तवाला जानकर भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं के पास यह बात कही—यदि यह व्यक्ति इस समय मरेगा तो स्वर्ग में पैदा होगा, क्योंकि इसका चित्त पवित्र है। जैसे किसी चीज को लाकर डाल दे, ऐसे ही यह स्वर्ग में पैदा होगा। प्राणी पवित्र चित्त होने के कारण सुगति को प्राप्त होते हैं।"

२. पुण्य सुख का ही नाम है

भिक्षुओ ! पुण्यों से मत डरो। भिक्षुओ ! यह पुण्य इष्ट, कान्त, प्रिय, मनाप सुख का ही नाम है। भिक्षुओ ! मैं बहुत दिनों तक किए हुए पुण्यों के इष्ट, कान्त, प्रिय, मनाप फल को बहुत दिनों तक भोगने को जानता हूँ। सात वर्षों तक मैत्री-चित्त की भावना करके सात संवर्त[3]

(=प्रलय) और विवर्त[४] (=सृष्टि) कल्पों तक इस लोक में नहीं लौटा। भिक्षुओ! संवर्त (=प्रलय) होने वाले कल्प में आभास्वर[५] (ब्रह्मलोक) में होता था और वितर्क (सृष्टि) होने वाले कल्प में शून्य ब्रह्म-विमान में पैदा होता था। भिक्षुओ! वहाँ मैं ब्रह्मा, महाब्रह्मा, अभिभू, अजित, सर्वद्रष्टा, वशवर्ती होता था। भिक्षुओ मैं छत्तीस बार देवेन्द्र शक्र हुआ था। सैकड़ों बार धार्मिक, धर्मराजा; चारों ओर विजय पाने वाला, जनपदों में शान्ति स्थापित करनेवाला और सात रत्नों से युक्त चक्रवर्ती राजा हुआ था। प्रादेशिक राज्य की कौन बात? भिक्षुओ! मुझे यह विचार हुआ—यह मेरे किस कर्म का फल है, कि कर्म का विपाक है' जिससे कि मैं इस समय ऐसा तपस्वी और ऐसा प्रतापी हूँ? तब भिक्षुओ! मुझे यह विचार हुआ—यह मेरे तीन कर्मों का फल है, तीन कर्मों का विपाक है,....... जैसे कि दान का, (इन्द्रिय-) दमन का संयम का।....

"श्रेष्ठ सुखदायक पुण्य को करे। दान दे, समआचरण करे और मैत्री-चित्त की भावना करे। इन तीनों सुखदायक धर्मों की भावना करके बुद्धिमान व्यक्ति दुःख रहित सुखलोक [=ब्रह्मलोक] में पैदा होता है।"

३. पुण्य-कार्य में देर न करना

भिक्षुओ! एक बात की भावना करने पर, बढ़ाने पर, वह इस लोक और परलोक दोनों के लिए हितकारक होती है। कौन-सी एक बात? पुण्य करने में प्रमाद न करना। भिक्षुओ! इस एक बात की भावना करने पर, बढ़ाने पर, यह इस लोक और परलोक दोनों के लिये हितकारक होती है।...

"बुद्धिमान लोग पुण्य करने में प्रमाद न करने की प्रशंसा करते हैं। प्रमाद न करने वाला बुद्धिमान व्यक्ति दोनों हितों को प्राप्त करता है, जो

कि इस लोक का हित है और जो कि परलोक का हित है। दोनों हितों की प्राप्ति से धीर व्यक्ति 'पण्डित' [= बुद्धिमान] कहा जाता है।"

४. हड्डियों का कंकाल

भिक्षुओ! कल्प भर आवागमन के चक्कर में पड़े रहनेवाले एक व्यक्ति की हड्डियों का कंकाल, हड्डियों का समूह, हड्डियों का ढेर इतना ऊँचा होगा जितना कि यह वैपुल्य[६] पहाड़ है, यदि कोई उन्हें जमा करनेवाला हो और वह जमा की हुई नष्ट न हों।"....

"यदि एक कल्प भर एक आदमी की हड्डियां जमा की जायँ, तो उनका ढेर पहाड़ के समान हो जाय। महर्षि ने ऐसा कहा है। (और वह भी ढेर) राजगृह के समीप स्थित गृध्रकूट (पहाड़) के उत्तरवाले वैपुल्य पहाड़ के समान ऊँचा हो जाय। जब आदमी भली प्रकार ज्ञान से दुःख, दुःख से मुक्ति और दुःख की शान्ति की ओर ले जानेवाले आर्य अष्टांङ्गिक मार्ग[७]— (इनचार) आर्य सत्यों[८] को देखता है, तब वह अधिक से अधिक सात बार जन्म ले, सांसारिक सब बन्धनों के खत्म होने से दुःख का अन्त करनेवाला होता है।"

५. झूठ बोलना

भिक्षुओ! जो व्यक्ति एक बात का उल्लंघन कर गया है उसके लिए मैं कोई भी कार्य ऐसा नहीं देखता जो कि वह न कर सके। कौन एक बात? जो कि भिक्षुओ! जानबूझ कर झूठ बोलना है।...

"एक बात का उल्लंघन कर जो झूठ बोलता है, उस परलोक के चिन्तन रहित पुरुष के लिए कोई पाप ऐसा नहीं है, जो वह न कर सके।"

६. बाँट कर खाना

भिक्षुओ! यदि प्राणी बाँटकर खाने के फल को ऐसा जानें, जैसा

कि मैं जानता हूँ, तो बिना दिए न खायें और उनके चित्त को कंजूसी का मैल न पकड़े। जो उनका अन्तिम कौर हो, उसे भी बिना बांटे न खायें, यदि उनको लेनेवाले हों चूँकि भिक्षुओ! प्राणी बाँट कर खाने के फल को ऐसा नहीं जानते हैं, जैसा कि मैं जानता हूँ, इसलिए बिना दिये खाते हैं और कंजूसी का मैल उनके चित्त को पकड़े रहता है।...

"यदि प्राणी ऐसा जानें, जैसा कि महर्षि ने बाँटकर खाने के फल को बतलाया है, तो वे कंजूसी के मैल को हटाकर पवित्र मन से समय पर आर्यों को दान दें, जिन्हें कि देने में महाफल होता है। बहुत से दान देने योग्य लोगों को अन्न और दान देकर यहाँ मनुष्य-योनि से च्युत होकर दाता स्वर्ग को जाते हैं। वे स्वर्ग में जाकर वहां इच्छानुरूप आनन्द करते हैं। बाँटकर के खाने के फल को कंजूसी-रहित लोग प्राप्त करते हैं।"

७. मैत्री-भावना

भिक्षुओ! जो कोई अच्छी गति प्राप्त कराने वाले पुण्य-कर्म हैं, वे सब मैत्री-चेतोविमुक्ति के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं उतरते, बल्कि मैत्री-चेतोविमुक्ति ही उनसे बढ़कर प्रकाशित होती, दमकती और चमकती है। भिक्षुओ! जैसे जो कुछ तारों का प्रकाश है, वह सब चन्द्रमा के प्रकाश के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं उतरता, बल्कि चन्द्रमा का प्रकाश ही उनसे बढ़कर प्रकाशित होता, दमकता और चमकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ! जो कोई अच्छी गति प्राप्त करानेवाले पुण्य-कर्म हैं, वे सब मैत्री-चेतोविमुक्ति के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं उतरते, बल्कि मैत्री-चेतोविमुक्ति ही उनसे बढ़कर प्रकाशित होती, दमकती और चमकती है। भिक्षुओ! जैसे वर्षा के पिछले महिने में शरद ऋतु में बादल-रहित विशुद्ध आकाश में चढ़ता हुआ सूर्य आकाश में फैले हुये सारे अन्धकार को नाश प्रकाशित होता, दमकता, और चमकता है। इसी प्रकार

भिक्षुओ ! जो कोई अच्छी गति प्राप्त कराने वाले पुण्य-कर्म हैं, वे सब मैत्री-चेतोविमुक्ति के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं उतरते, बल्कि मैत्री-चेतोविमुक्ति ही उनसे बढ़कर प्रकाशित होती, दमकती और चमकती है। भिक्षुओ ! जैसे रात के बीतने पर उषाकाल में शुक्रतारा प्रकाशित होता, दमकता और चमकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ जो कोई अच्छी गति प्राप्त कराने वाले पुण्य कर्म हैं, वे सब मैत्री-चेतोविमुक्ति के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं उतरते, बल्कि मैत्री-चेतोविमुक्ति ही उनसे बढ़कर प्रकाशित होती, दमकती और चमकती है। ...

"जो स्मृतिमान अप्रमाण मैत्री की भावना करता है, उससे संयोजन निर्वाण को देखते हुए दुर्बल होते हैं। वह यदि एक भी प्राणी से शुद्ध-चित्त से मैत्री करता है, तो उसी से वह पुण्यवान् होता है और यदि सब प्राणियों पर मन से अनुकम्पा करता है तो वह आर्य बहुत पुण्य कमाता है। जो राजर्षि प्राणियों से भरे पृथ्वी को जीतकर दान देते हुए विचरण किए और अश्वमेध, पुरुषमेध सम्मापास, वाजपेय और निरर्गल (=सर्वमेध) को किये, वे मैत्री-चित्त की भावना करने के सोलहवें भाग के बराबर भी (फल का) अनुभव नहीं किये। जैसे कि चन्द्रमा के प्रकाश के समक्ष सब तारा-समूह। जो न हनन करता है, न हिंसा करता है और न बरबाद करता है तथा सभी प्राणियों से मैत्री करता है, उसे किसी से भी दुश्मनी नहीं होती।"

दूसरा निपात

पहला वर्ग

१. इन्द्रिय संयम

भिक्षुओ ! दो बातों से युक्त भिक्षु इसी जन्म में दुःख, पीड़ा, परेशानी और सन्ताप के साथ विहरता है तथा शरीर छूटने पर उसकी दुर्गति जाननी चाहिये। किन दो ? इन्द्रियों में संयम न करना और भोजन करने में मात्रा न जानना। ..

"जिस भिक्षु के चक्षु, स्रोत, घ्राण, जिह्वा, काय और मन— इतने द्वार गुप्त नहीं हैं, भोजन करने में मात्रा नहीं जाननेवाला और इन्द्रियों में असंयमी है, वह दुःख पूर्वक शारीरिक दुःख तथा चैतसिक दुःख को प्राप्त होता है उस प्रकार का (भिक्षु) जलते हुये काया और जलते हुये चित्त से दुःखपूर्वक विहरता है।

२. इन्द्रिय संयम

भिक्षुओ ! दो बातों से युक्त भिक्षु इसी जन्म में सुख, पीड़ा-रहित, परेशानी रहित और सन्ताप रहित विहरता है तथा शरीर छूटने पर.... उसकी सुगति जाननी चाहिए। किन दो ? इन्द्रियों में संयम करना और भोजन करने में मात्रा जानना।...

"जिस भिक्षु के चक्षु, स्रोत, घ्राण, जिह्वा, काय और मन—इनके द्वार भली प्रकार गुप्त हैं, भोजन करने में मात्रा जानने वाला और इन्द्रियों में संयमी है। वह सुख पूर्वक शारीरिक-सुख तथा चैतसिक-सुख को प्राप्त होता है। उस प्रकार का [भिक्षु] न जलती हुई काया और न जलते हुए चित्त से सुखपूर्वक विहरता है।"

३. संताप देनेवाली बातें

भिक्षुओ ! दो बातें संताप पैदा करने वाली हैं। कौन दो ? भिक्षुओ ! यहाँ कोई उत्तम कार्य न किया, पुण्य न किया। भय की रक्षा न किया, और पाप कर्म किया हुआ होता है, वह 'मैंने उत्तम कार्य नहीं किया' सोच संताप करता है, 'मैंने पाप किया' सोच संताप करता है। भिक्षुओ ! ये दो बातें संताप पैदा करने वाली हैं।

"शारीरिक, वाचिक अथवा मानसिक तथा दूसरे भी बुरे कहलाने वाले दुष्कर्म को करके, पुण्य कर्म को न कर, बहुत पाप-कर्म कर, शरीर छूटने पर वह दुर्बुद्धि नरक में उत्पन्न होता है।"

४. हर्षित करने वाली बातें

भिक्षुओ ! दो बातें संताप नहीं पैदा करने वाली हैं। कौन दो ? भिक्षुओ ! यहाँ कोई उत्तम कार्य किया हुआ, पुण्य किया, भय की रक्षा किया और पाप-कर्म नहीं किया हुआ होता है, वह 'मैंने उत्तम कार्य किया' सोच संताप नहीं करता है भिक्षुओं ये दो बातें संताप नहीं पैदा करने वाली हैं।...

"शारीरिक, वाचिक अथवा मानसिक तथा दूसरे भी बुरे कहलाने वाले दुष्कर्म को छोड़ करके, पाप कर्म को न कर, बहुत पुण्य कर्म कर, शरीर छूटने पर वह बुद्धिमान स्वर्ग में उत्पन्न होता है।"

५. बुरा शील

भिक्षुओ ! दो बातों से युक्त व्यक्ति लाये हुए को डालने के समान नरक में पड़ता है। किन दो ? बुरे शील और बुरी दृष्टि [= धारणा] से।...

"बुरे शील और बुरी दृष्टि इन दो बातों से जो पुरुष युक्त होता है, वह दुर्बुद्धि शरीर छूटने पर नरक में पैदा होता है।"

६. भला शील

भिक्षुओ ! दो बातों से युक्त से लाये हुये को डालने के समान स्वर्ग में पैदा होता है। किन दो ! भले शील और भली दृष्टि से।...

"भले शील और भली दृष्टि—इन दो बातों से जो पुरुष युक्त होता है; वह बुद्धिमान शरीर छूटने पर स्वर्ग में पैदा होता है।"

७. संकोच

भिक्षुओ अ-परिश्रमी और अ-संकोची भिक्षु संबोधि (=परम ज्ञान निर्वाण[१] और सर्वोत्तम कल्याण की प्राप्ति के लिए अयोग्य है। भिक्षुओ परिश्रमी और संकोची भिक्षु संबोधि, निर्वाण और सर्वोत्तम कल्याण की प्राप्ति के लिए योग्य है।...

"जो अ-परिश्रमी, अ-संकोची, आलसी, प्रयत्न-रहित, मानसिक तथा शारीरिक आलस्य की अधिकता से युक्त, निर्लज्ज और पुण्य कर्मों को करने में आदर नहीं करने वाला है, उस प्रकार का भिक्षु उत्तम सम्बोधि की प्राप्ति के लिए अयोग्य है। और जो स्मृतिवान्, ज्ञानी, ध्यानी, परि-श्रमी, संकोची तथा प्रमाद नहीं करने वाला है, वह जन्म और बुढ़ापे के बन्धन को यहीं काट कर सर्वोत्तम सम्बोधि (= ज्ञान) को पा लेता है।"

८. बहकाने के लिए नहीं

भिक्षुओ ! यह ब्रह्मचर्य लोगों को बहकाने- लोगों में बड़ा कहलवाने और लाभ, सत्कार तथा प्रशंसा पाने के लिए नहीं रहा जाता कि 'लोग

मुझे ऐसा जानें' । बल्कि भिक्षुओ ! यह ब्रह्मचर्य संयम और त्याग के लिए रहा जाता है।...

"उन भगवान् ने बतलाया है कि उपद्रव-रहित, निर्वाण को पहुँचाने वाला यह ब्रह्मचर्य संयम और त्याग के लिए है। यह मार्ग महान् महर्षियों द्वारा चलाया गया है। भगवान् बुद्ध के बतलाने के अनुसार जो-जो लोग इस मार्ग पर चलते हैं, वे शास्ता (= बुद्ध) की आज्ञा का पालन करने वाले दुःख का अन्त कर डालेंगे।"

९. लाभ-सत्कार के लिए नहीं

भिक्षुओ ! यह ब्रह्मचर्य लोगों को बहकाने, लोगों में बड़ा कहलवाने और लाभ, सत्कार तथा प्रशंसा पाने के लिए नहीं रहा जाता कि 'लोग मुझे ऐसा जानें।' बल्कि भिक्षुओ ! यह ब्रह्मचर्य अभिज्ञा[१०] और परिज्ञा[११] के लिये रहा जाता है।...

"उन भगवान् ने बतलाया है कि उपद्रव-रहित, निर्वाण को पहुंचाने वाला यह ब्रह्मचर्य अभिज्ञा और परिज्ञा के लिए है। यह मार्ग महान महर्षियों द्वारा चला गया है। भगवान् बुद्ध के बतलाने के अनुसार जो-जो लोग इस मार्ग पर चलते हैं, वे शास्ता की आज्ञा का पालन करने वाले दुःख का अन्त कर डालेंगे।"

१०. संवेग से मुक्ति

भिक्षुओ ! दो बातों से युक्त भिक्षु इसी जन्म में अधिक सुख सौमनस्य के साथ विहरता है और आश्रवों[१२] (= चित्त-मलों) के क्षय के लिए उचित रूप से प्रयत्न करता है। किन दो ! संवेग पैदा होनेवाली बातों में संवेग करने और संवेग के लिए उचित रूप से प्रयत्न करने से।...

"परिश्रमी चतुर, बुद्धिमान भिक्षु ज्ञान से भली प्रकार देखकर संवेग पैदा होनेवाली बातों में संवेग करे। इस प्रकार विहरने वाला, परिश्रमी, शान्त और चंचलता-रहित (भिक्षु) चित्त की समाधि (=एकाग्रता) में लगे हुये दुःख के क्षय को प्राप्त कर लेता है।"

दूसरा वर्ग

१. दो वितर्क

भिक्षुओ ! तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्ध को प्रायः दो वितर्क हुआ करते हैं। कल्याण करने का वितर्क और एकान्त-चिन्तन का वितर्क। भिक्षुओ ! तथागत किसी को दुःख नहीं देनेवाले हैं, किसी को दुःख न देने में ही लगे रहते हैं, इसलिए भिक्षुओ ! किसी को दुःख नहीं देनेवाले तथागत को प्रायः यही वितर्क हुआ करता है—'मैं इस ईर्या (= चाल-ढाल) से किसी भी चेतन या जड़ को पीड़ा नहीं दे रहा हूँ'।

भिक्षुओ ! तथागत एकान्त-चिन्तन वाले हैं, एकान्त-चिन्तन में लगे रहते हैं, इसलिये भिक्षुओ ! एकान्त चिन्तन वाले और एकान्त-चिन्तन में लगे रहनेवाले तथागत को प्रायः यही वितर्क हुआ करता है—'जो बुराइयां थी, वह सब दूर हो गईं।' इसलिए भिक्षुओ। तुम लोग भी किसी को दुःख नहीं देनेवाले और किसी को दुःख न देने में ही लगे विहरो। भिक्षुओ ! तब किसी को दुख न देने में लगे हुए विहरनेवाले तुम लोगों को प्रायः यही वितर्क हुआ करेगा—'हम लोग इस ईर्या से किसी भी चेतन या जड़ को पीड़ा नहीं दे रहे हैं।'

भिक्षुओ ! एकान्त-चिन्तन वाले और एकान्त-चिन्तन में लगे विहरो। भिक्षुओ ! तब एकान्त-चिन्तन वाले और एकान्त चिन्तन में

लगे हुये विहरने वाले तुम लोगों को प्रायः यही वितर्क हुआ करेगा— 'क्या बुराई है? क्या दूर नहीं हुआ? किसे छोड़ें?'...

"न सहे जाने लायक को सहने वाले, (मोह रूपी) अन्धकार को दूर करनेवाले, (भव-सागर से) पार हो गये महर्षि, जिन्होंने पाने लायक को पा लिया है. अपने को वश में कर लिया है, जो आश्रव-रहित हैं, विषमता को तर गये हैं, तृष्णा के नाश से विमुक्त हो गये हैं, जो मुनि हैं और अन्तिम शरीर धारण करते हैं, जिन्होंने अभिमान को छोड़ दिया है, जिन्हें मैं बुढ़ापे को पार किया हुआ कहता हूं, उन भगवान् बुद्ध को दो वितर्क हुआ करते हैं। पहला कल्याण में लगने का वितर्क और दूसरा चिन्तन का वितर्क।

पथरीले पहाड़ की चोटी पर खड़ा (पुरुष) जैसे चारों ओर जनता को देखे, उसी तरह सर्वत्र नेत्र वाले महाप्रज्ञावान शोक-रहित भगवान् बुद्ध धर्म रूपी महल पर चढ़कर शोक-निमग्न, जन्म जरा से पीड़ित जनता को देखते हैं।"

२. दो प्रकार के उपदेश

भिक्षुओ! पर्याय से तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्ध के उपदेश दो प्रकार के होते हैं। कौन से दो? 'पाप को बुराई के तौर से देखो' यह पहले प्रकार का उपदेश है। 'पाप को बुराई के तौर से देखकर उससे निर्वेद करो, विरक्त होओ, विमुक्त होओ' यह दूसरे प्रकार का उपदेश है। भिक्षुओ! पर्याय से तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्ध के उपदेश दो प्रकार के होते हैं।...

"सब प्राणियों पर अनुकम्पा करनेवाले तथागत बुद्ध के उपदेश पर्याय से दो प्रकार के कहे गये हैं। एक बुराई को देखो और दूसरा उससे विरक्त चित्त वाले होकर दुःख का अन्त करोगे।"

३. अच्छे-बुरे के अगुआ

भिक्षुओ ! बुरे कामों को करने के लिये अविद्या अगुआ है, जिसके अनुगामी निर्लज्जता और असंकोच हैं। भिक्षुओ ! भले कामों को करने के लिए विद्या अगुआ है, जिसके अनुगामी लज्जा और संकोच हैं।...

"इस लोक तथा परलोक में जो कोई दुर्गतियाँ हैं, सभी अविद्या के कारण हैं। इच्छा और लोभ से उत्पन्न हैं, जब आदमी बुरी नियत वाला निर्लज्ज और पुण्य करने में आदर करनेवाला नहीं होता है, तब वह पाप कमाता है और उससे नरक जाता है। इसलिए भिक्षु राग, लोभ और अविद्या को छोड़ विद्या उत्पन्न कर सब दुर्गतियों से छूट जाय।"

४. बुद्ध की स्पृहा

भिक्षुओ ! वे प्राणी बिल्कुल ही वंचित हैं, जो कि आर्य प्रज्ञा से वंचित हैं। वे इसी जन्म में दुःख, पीड़ा, परेशानी और संताप के साथ विहरते हैं तथा शरीर छूटने पर उनके लिए दुर्गति जाननी चाहिये। भिक्षुओ वे प्राणी वंचित नहीं हैं, जो कि आर्य प्रज्ञा से वंचित नहीं हैं। वे इसी जन्म में बिना पीड़ा, परेशानी और संताप के, सुख-पूर्वक विहरते हैं तथा शरीर छूटने पर उनके लिए सुगति जाननी चाहिये।...

"देवताओं सहित सारे लोक को देखो, प्रज्ञा से वंचित, नाम और रूप में आशक्त हो 'यही सत्य है' समझता है। जो यह राग आदि को नष्ट करने वाली प्रज्ञा है, वही श्रेष्ठ है, जो कि बार-बार जन्म लेने के खात्मा को भली प्रकार जानती है।

देवता और मनुष्य उन स्मृतिमान तथा प्रज्ञावान बुद्धों की स्पृहा करते हैं, जो कि अन्तिम शरीर धारण करने वाले हैं।"

५. लज्जा और संकोच से लोक का पालन

भिक्षुओ ! दो परिशुद्ध बातें लोक का पालन करती हैं। कौन-सी दो ? लज्जा और संकोच। भिक्षुओ यदि वे दोनों परिशुद्ध बातें लोक का पालन न करें तो यहाँ माता, मौसी, मामी, गुरुवाइनि या बड़ों की स्त्री का भेद न जान पड़े, लोक में उसी प्रकार मर्यादा न रहे, जैसे की बकरी-भेड़, मुर्गी-सूअर, कुत्ते-गीदड़। चूंकि भिक्षुओ ! ये दो परिशुद्ध बातें लोक का पालन करती हैं, इसलिए माता, मौसी, मामी, गुरुवाइनि या बड़ों की स्त्री का भेद जान पड़ता है।

"जिनमें लज्जा और संकोच बिल्कुल नहीं है, वे परिशुद्ध बातों से रहित व्यक्ति जन्म और मृत्यु में पड़े रहते हैं। किन्तु जिनमें लज्जा और संकोच भली भाँति बने हैं, जो ब्रह्मचर्य का भली प्रकार पालन करने वाले हैं, वे शान्त व्यक्ति फिर जन्म नहीं लेते।"

६. निर्वाण

भिक्षुओ ! (निर्वाण) अज्ञात, अभूत, अकृत और असंस्कृत है। यदि भिक्षुओ ! यह अजात, अभूत, अकृत, और असंस्कृत न होता, तो जात, भूत, कृत, संस्कृत का निस्तार नहीं दिखाई देता।...

"(यह शरीर) जात, भूत, उत्पन्न, कृत, संस्कृत, अ-ध्रुव, बुढ़ापा और मृत्यु से पीड़ित, रोगों का घर, (क्षण-) भंगुर तथा आहार और तृष्णा से होने वाला है, उसमें प्रेम करना ठीक नहीं। उसका निस्तार (= निर्वाण) शान्त है, वह तर्क से नहीं जाना जा सकता, वह ध्रुव, अजात, न उत्पन्न होने वाला तथा शोक और राग रहित है, सभी दुःखों का वहां निरोध हो जाता है, वह संस्कारों की शान्ति एवं (परम) सुख है।"

७. दो प्रकार का निर्वाण

भिक्षुओ ! निर्वाण धातु दो प्रकार की है। कौन-सी दो ? (१) सोपादिशेष निर्वाण धातु और (२) अनुपादिशेष निर्वाण-धातु। भिक्षुओ ! क्या है सोपादिशेष निर्वाण-धातु ? यहाँ भिक्षुओ ! भिक्षु अर्हत्, क्षीणाश्रव (आश्रव रहित), ब्रह्मचर्यपूर्ण, कृतकृत्य, उतरे-भार, अपने मतलब को प्राप्त, सांसारिक बन्धनों से रहित और भली प्रकार से रहित और भली प्रकार जानकर विमुक्त हो गया होता है, उसकी पांचों इन्द्रियाँ होती ही हैं, जिनके शान्त न होने से प्रिय-अप्रिय का अनुभव करता है, और सुख-दुःख भोगता है, किन्तु उसके जो राग का क्षय होना है, द्वेष का क्षय होना है और मोह का क्षय होना है, भिक्षुओ ! इसे ही सोपाधिशेष निर्वाण धातु कहते हैं।

भिक्षुओ ! क्या है अनुपादिशेष निर्वाण-धातु ? यहाँ भिक्षुओ ! भिक्षु ! अर्हत......भली प्रकार जानकर विमुक्त हो गया होता है, भिक्षुओ उसके सभी अनुभव यहां ही अनभिनन्दनीय और शान्त हो जायेंगे। भिक्षुओ ! इसे अनुपादिशेष निर्वाण-धातु कहते हैं। भिक्षुओ ! यह दो प्रकार की निर्वाण-धातु हैं।...

"अनासक्त और चक्षुमान भगवान् बुद्ध ने निर्वाण-धातु को इन दो प्रकार का बताया है। एक धातु का नाम सोपादिशेष है, जो इसी शरीर में बार-बार लाने वाली तृष्णा के क्षय के बाद प्राप्त होती है, और दूसरी अनुपादिशेष है, जो शरीर छूटने पर प्राप्त होती है, और जिसके प्राप्त होने पर उत्पत्ति बिल्कुल ही रुक जाती है। जो विमुक्त-चित्त अर्हत् संसार में बार-बर लाने वाली तृष्णा के क्षय के बाद असंस्कृत पद को जान लेते हैं वे धर्म के सार को पा, निर्वाण में लग्न हुये सब प्रकार की उत्पत्ति को त्याग देते हैं।"

८. एकान्तवास करना

भिक्षुओ ! एकान्तवास करते एकान्तवास में लगे, भीतरी चित्त को शान्त करने में जुटे, सदा ध्यान में लगे, विपश्यना से युक्त और एकान्त स्थान में अधिक रहने वाले होकर विहरो । भिक्षुओ ! एकान्तवास करने वाले, एकान्तवास में लगे, भीतरी चित्त को शान्त करने में जुटे, सदा ध्यान में लगे, विपश्यना से युक्त और एकान्त स्थान में अधिक रहनेवाले होकर विहरते हुए (भिक्षु) के लिए दो फलों में से कोई एक फल जानना चाहिये—इसी जन्म में अर्हत्व की प्राप्ति (= आज्ञा) या क्लेशों के होने पर अनागामी-भाव ।....

"जो शान्त-चित्त ज्ञानी, स्मृतिमान और ध्यानी हैं, काम-भोगों में अनासक्त हो भली प्रकार धर्म को देखते हैं, जो प्रमाद नहीं करनेवाले तथा प्रमाद करने में भय खाने वाले हैं, वे मार्ग से च्युत होने के योग्य नहीं हैं, वे तो निर्वाण के निकट ही पहुँच गये हैं ।"

९. गुणों से युक्त होकर विहरना

भिक्षुओ ! शिक्षाओं के गुण से युक्त, उत्तम प्रज्ञा, विमुक्तिसार और श्रेष्ठ स्मृति के साथ विहरो । भिक्षुओ ! शिक्षाओं के गुणों से युक्त, उत्तम प्रज्ञा, विमुक्ति-सार और श्रेष्ठ स्मृति के साथ विहरने वाले के लिये दो फलों में से कोई एक फल जानना चाहिये—इसी जन्म में अर्हत्व की प्राप्ति या क्लेशों के रहने पर अनागामी-भाव । ...

"जो अशैक्ष्य (= अर्हत्) है, जिसे कुछ भी त्यागने को शेष नहीं है, जो उत्तम प्रज्ञा पा लिया है, जो जन्म के खत्म होने को देखने वाला है, और जो अभिमान रहित है, उस अन्तिम शरीरधारी मुनि को बुढ़ापा पार कर गया कहता हूँ । इसलिए भिक्षुओ ! सदा ध्यान में लीन,

एकाग्र, परिश्रमी और जन्म के खत्म होने को देखने वाले होकर सेना-सहित मार को पछाड़, जन्म और मृत्यु को पार कर जाओ।"

१०. सोने वाले उठो!

"भिक्षुओ! भिक्षु जागरणशील हो, स्मृति और ज्ञान से युक्त, एकाग्र और प्रमुदित, प्रसन्न और पुण्य कर्मों को करने के लिए समय जानने वाला होकर विहरे। भिक्षुओ! जागरणशील हो, स्मृति और ज्ञान से युक्त, एकाग्र, प्रमुदित, प्रसन्न और पुण्य कर्मों को करने के लिए समय जानकर विहरने वाले भिक्षु के लिए दो फलों में से कोई एक फल जानना चाहिए—इसी जन्म में अर्हत्व की प्राप्ति या क्लेशों के रहने पर अनागामी-भाव।...

"जागने वाले इसे सुनें और जो सोये हैं वे उठें। सोने से जागना श्रेष्ठ है, जागने वाले के लिए भय नहीं। जो जागरणशील, स्मृतिमान, संप्रज्ञ, एकाग्र, प्रमुदित और प्रसन्न (व्यक्ति) है, वह समयानुसार भली प्रकार धर्म का विचार करते हुए समाधिस्थ हो (अविद्या रूपी) अन्धकार को नष्ट कर देता है। इसलिए जागरणशील बनो। परिश्रमी, ज्ञानी और ध्यान-प्राप्त भिक्षु जन्म और बुढ़ापा के बन्धन को काट कर यहीं सर्वोत्तम ज्ञान को प्राप्त कर लेता है।"

११. ये नरकगामी हैं

भिक्षुओ! इन दो बातों को न छोड़ने वाले नरकगामी हैं। किन दो? जो अब्रह्मचारी होते हुए भी अपने को ब्रह्मचारी कहता है और जो परिपूर्ण और परिशुद्ध रूप से ब्रह्मचर्य पालन करने वाले को झूठमूठ में अब्रह्मचारी होने का दोष लगाता है। भिक्षुओ! इन दो बातों को न छोड़ने वाले नरकगामी हैं।....

"असत्यवादी नरक में जाता है और वह भी जो कि करके 'नहीं किया' कहता है। दोनों ही प्रकार के नीच कर्म करने वाले मनुष्य मर कर समान होते हैं। कंठ में काषाय (वस्त्र) डाले कितने ही पापी असंयमी हैं, जो पापी (अपने) पाप कर्मों से नरक में उत्पन्न होते हैं। असंयमी दुराचारी हो राष्ट्र का पिण्ड (= देश का अन्न) खाने से अग्नि-शिखा के समान तप्त लोहे का गोला खाना उत्तम है।"

१२. दो मिथ्या धारणायें

भिक्षुओ ! दो मिथ्या धारणाओं में पड़े देवता और मनुष्यों में कोई-कोई चिपट जाते हैं, कोई-कोई दौड़ लगाते हैं और कोई-कोई आँख वाले (= प्रज्ञावान) देखते हैं। भिक्षुओ ! कैसे कोई-कोई चिपट जाते हैं ? भिक्षुओ ! देवता और मनुष्य भव में रमने वाले हैं, भव में रत हैं, भव में प्रमुदित हैं, भव निरोध का उपदेश देते समय उनका चित्त नहीं दौड़ता है, नहीं प्रसन्न होता है, नहीं ठहरता है, नहीं लगता है। इस प्रकार भिक्षुओ ! कोई-कोई चिपट जाते हैं।

भिक्षुओ ! कैसे कोई-कोई दौड़ लगाते हैं ? कोई-कोई भव से ही घृणा, लज्जा जिगुप्सा करते हुये विभव (= उच्छेद चाहते हैं। चूंकि यह आत्मा शरीर छूटने पर....उच्छिन्न हो जाती है, विनष्ट हो जाती है, मृत्यु के बाद नहीं रहती है, यही शान्त है, यही प्रणीत (= उत्तम) है, यही यथार्थ है। भिक्षुओ ! इस प्रकार कोई-कोई दौड़ लगाते हैं।

भिक्षुओ ! कैसे कोई-कोई आँख वाले देखते हैं ? यहाँ भिक्षु भूत (= पञ्चस्कन्ध)[१३] को भूत के तौर पर देखता है, भूत को भूत के

तौरपर देखकर भूत के निर्वेद, विराग और निरोध के लिए लगा होता है। भिक्षुओ ! इस प्रकार आँख वाले देखते हैं।....

"जो भूत को भूत के तौर पर देख, भूत का अतिक्रमण कर भव-तृष्णा के क्षय हो जाने पर निर्वाण पा लेते हैं, वे छोटी-बड़ी वस्तुओं में वितृष्णा, भूत जानने वाले भिक्षु भूत के नष्ट होने पर फिर जन्म नहीं लेते।"

— —

तीसरा निपात

पहला वर्ग

१. पाप की जड़

भिक्षुओ ये तीन पाप के मूल हैं। कौन तीन? लोभ पाप का मूल है, द्वेष पाप का मूल है, मोह पाप का मूल है। भिक्षुओ! ये तीन पाप के मूल हैं।....

"अपने भीतर उत्पन्न लोभ, द्वेष और मोह पाप चित्त वाले व्यक्ति की वैसे ही हिंसा करते हैं जैसे कि केले के वृक्ष की उसका फल।"

२. तीन धातुयें

भिक्षुओ! ये तीन धातुयें हैं। कौन तीन? रूप-धातु, अरूप-धातु और निरोध-धातु। भिक्षुओ! ये तीन धातुयें हैं।....

"रूप धातु को जानकर, अरूपों में अनासक्त हो, जो निरोध (= निर्वाण) को पा सभी क्लेशों से मुक्त हो गये हैं, वे लोग मृत्यु को खत्म कर दिये हैं। अनाश्रव सम्यक् सम्बुद्ध काया से सांसारिक आसक्ति-रहित निर्वाण का स्पर्शकर, आशक्ति-त्याग को भली प्रकार साक्षात् कर शोक और राग-रहित पद (निर्वाण) का उपदेश देते हैं।"

३. तीन वेदनायें

भिक्षुओ ! ये तीन वेदनायें (= अनुभव) हैं। कौन तीन ? सुख वेदना, दुःख वेदना और अदुःख-असुख वेदना। भिक्षुओ ! ये तीन वेदनायें हैं।....

"एकाग्र-चित्त, संप्रज्ञ और स्मृतिमान बुद्ध का शिष्य वेदना और वेदना की उत्पत्ति को जानता है और जहाँ यह शान्त हो जाती हैं, उनके विनाश के मार्ग को भी जानता है। वेदनाओं के विनाश के बाद तृष्णा-रहित हो भिक्षु परिनिर्वाण को पा लेता है।"

४. तीन वेदनायें

भिक्षुओ ! ये तीन वेदनायें हैं। कौन तीन ? सुख वेदना, दुःख वेदना और अदुःख-असुख वेदना। भिक्षुओ ! सुख-वेदना को दुःख के तौर पर देखना चाहिये। दुःख-वेदना को शल्य (= काँटा) के तौर पर देखना चाहिये। अदुःख-असुख-वेदना को अनित्य के तौर पर देखना चाहिये भिक्षुओ ! जब भिक्षु सुख-वेदना को दुःख के तौर पर देख लेता है, दुःख-वेदना को शल्य के तौर पर देख लेता है, अदुःख-असुख-वेदना को अनित्य के तौर पर देख लेता है, तो भिक्षुओ ! उस भिक्षु को आर्य समदर्शी कहते हैं, उसने तृष्णा को काट दिया, सांसारिक बन्धन को उलट दिया, अच्छी तरह अभिमान को त्याग कर दुःख का अन्त कर दिया।....

"जिसने सुख को दुःख के तौर पर, दुःख को शल्य के तौर पर और शान्त अदुःख-असुख को अनित्य के तौर पर देख लिया है, वह उनसे मुक्त होने के कारण समदर्शी भिक्षु है। उस अभिज्ञा-प्राप्त शान्त मुनि ने सांसारिक सभी बन्धनों को लाँघ दिया है।"

५. तीन खोजें

भिक्षुओ ! ये तीन खोज हैं। कौन तीन ? काम-भोग की खोज, उत्पत्ति की खोज और ब्रह्मचर्य की खोज। भिक्षुओ ! ये तीन खोज हैं।...

"एकाग्र-चित्त, संप्रज्ञ और स्मृतिमान शिष्य खोज और खोज की उत्पत्ति को जानता है और जहां यह शान्त हो जाती हैं, उनके विनाश के मार्ग को भी जानता है। खोजों के विनाश के बाद तृष्णा-रहित हो भिक्षु परिनिर्वाण को पा लेता है।"

६. तीन खोजें

भिक्षुओ ! ये तीन खोज हैं। कौन तीन ? काम-भोग की खोज उत्पत्ति की खोज और ब्रह्मचर्य की खोज।...

"काम-भोग की खोज, उत्पत्ति की खोज और ब्रह्मचर्य की खोज के साथ—इन्हें ही सत्य मानना मिथ्या धारणाओं को उत्पन्न करना है, किन्तु जो सब प्रकार के राग से रहित है और तृष्णा के नाश से विमुक्त हो गया है, उसने खोजों को त्याग दिया है और उसकी मिथ्या धारणायें भी नष्ट हो गई हैं। खोजों के खत्म हो जाने पर भिक्षु तृष्णा और सन्देह-रहित हो जाता है।"

७. तीन आश्रव

भिक्षुओ ! ये तीन आश्रव (=चित्त-मल) हैं। कौन तीन ? काम आश्रव, भव आश्रव और अविद्या-आश्रव।...

"एकाग्र-चित्त, संप्रज्ञ और स्मृतिमान बुद्ध का शिष्य आश्रवों और आश्रवों की उत्पत्ति को जानता है और जहां यह शान्त हो जाते हैं, उनके

विनाश के मार्ग को भी जानता है। आश्रवों के विनाश के बाद तृष्णा-रहित हो भिक्षु परिनिर्वाण को पा लेता है।"

८. तीन आश्रव

भिक्षुओ ! ये तीन आश्रव हैं। कौन तीन ? काम-आश्रव,........।...

"जिसका काम-आश्रव क्षीण हो गया है और अविद्या दूर हो गई है। भव-आश्रव क्षीण हो गया है तथा सांसारिक आसक्तियों से मुक्त हो गया है, वह सेना-सहित मार को जीत कर अन्तिम शरीर धारण कर रहा है।"

९. तीन तृष्णायें

भिक्षुओ ! ये तीन तृष्णायें हैं। कौन तीन ? काम-तृष्णा, भव-तृष्णा और विभव तृष्णा।...

"जो तृष्णा के बन्धन में बँधे और छोटी-बड़ी चीजों में आसक्त हैं, वे लोग मार के बन्धन में बँधे हैं, वे कल्याण को नहीं प्राप्त हुये हैं। जन्म और मृत्यु में पड़े हुये वे लोग चक्कर काटा करते हैं। जो तृष्णा को त्याग, छोटी-बड़ी चीजों में वितृष्णा हैं, वे आश्रवों के क्षय को प्राप्त हो लोक को पार कर लिये हैं।"

१०. मार के राज्य से बाहर निकलना

भिक्षुओ ! तीन बातों से युक्त भिक्षु मार के राज्य को अतिक्रमण कर सूर्य के समान चमकता है। किन तीन ? भिक्षुओ ! यहाँ भिक्षु अशैक्ष्य शील-स्कन्ध से युक्त होता है, और अशैक्ष्य प्रज्ञा-स्कन्ध से युक्त होता है।...

"जिसने शील, समाधि और प्रज्ञा की भली प्रकार भावना की है, वह मार के राज्य को अतिक्रमण कर सूर्य के समान चमकता है।"

दूसरा वर्ग

१. पुण्य के तीन साधन

भिक्षुओ ! ये तीन पुण्यक्रिया-वस्तुयें हैं। कौन तीन ? दानमय-पुण्यक्रिया-वस्तु, शीलमय-पुण्यक्रिया-वस्तु और भावनामय-पुण्यक्रिया-वस्तु।...

"श्रेष्ठ सुखदायक पुण्य को करे। दान दे, सम-आचरण करे और मैत्री-चित्त की भावना करे। इन तीनों सुखदायक धर्मों की भावना करके बुद्धिमान व्यक्ति दुःख रहित सुख-लोक (= ब्रह्मलोक) में पैदा होता है।"

२. तीन चक्षु

भिक्षुओ ! ये तीन चक्षु हैं। कौन तीन ! मांस-चक्षु दिव्य-चक्षु और प्रज्ञा-चक्षु। ...

"मांस-चक्षु, दिव्य-चक्षु और सर्वोत्तम प्रज्ञा-चक्षु—इन तीन चक्षुओं को पुरुषोत्तम (= बुद्ध) ने कहा है। मांस-चक्षु की उत्पत्ति से ही दिव्य-चक्षु उत्पन्न होता है। जब ज्ञान उत्पन्न होता है, तब सर्व-श्रेष्ठ प्रज्ञा-चक्षु उत्पन्न हो जाता है, जिस चक्षु की प्राप्ति से सारे दुःख से छूट जाता है।"

३. तीन इन्द्रियाँ

भिक्षुओ ! ये तीन इन्द्रियाँ हैं। कौन तीन ? अनज्ञात-आज्ञास्यामि

(=न जाने को जानूँगा)–इंद्रिय, आज्ञा (=जानने वाली)–इंद्रिय और आज्ञातावी (=जानी हुई)–इंद्रिय (=अर्हत-ज्ञान) ।...

"सीधे मार्ग पर चलने वाले, अभ्यास शील शैक्ष्य को अर्हत्-मार्ग में प्रथम ज्ञान होता है, उसके बाद अर्हत्व-ज्ञान और तत्पश्चात् अर्हत्व-फल से (प्रज्ञा-) विमुक्ति का ज्ञान होता है—"सांसारिक-बन्धनों के क्षय के बाद मुझे न कुपित होने वाली विमुक्ति प्राप्त हो गई।" वह इंद्रिय-युक्त, शान्त और शान्ति-पद में लीन सेना सहित मार को जीतकर अन्तिम शरीर धारण कर रहा है।"

४· तीन काल

भिक्षुओ ! ये तीन काल (= अध्व) हैं। कौन तीन ? अतीत काल, भविष्यत् काल और वर्तमान काल ।...

"प्राणी कथाशीली हैं और वे कथा में ही स्थित हैं। वे कथा को न जानकर मृत्यु के बन्धन में पड़ जाते हैं। जो कथा को जानकर कहने वाले (=आत्मा) को नहीं ग्रहण करता और मन से सर्वोत्तम शान्ति-पद विमोक्ष को स्पर्श कर लिया है, वह निर्वाण प्राप्त है, शान्त होकर शान्ति-पद में लीन है। भली प्रकार सोच-विचार कर सेवन करनेवाला धर्म में स्थिरता-प्राप्त विद्वान् फिर जन्म नहीं ग्रहण करता।"

५· तीन दुराचार

भिक्षुओ ! ये तीन दुराचार (=दुश्चरित्र) हैं। कौन तीन ? शारीरिक दुराचार, वाचिक दुराचार और मानसिक दुराचार ।...

"शारीरिक, वाचिक और मानसिक दुराचारों को तथा दूसरे जो दोष हैं उन्हें भी करके, पुण्य-कर्म को न कर, बहुत पाप करके, मूर्ख व्यक्ति शरीर छूटने पर नरक में पैदा होता है।"

६. तीन सदाचार

भिक्षुओ ! ये तीन सदाचार हैं। कौन तीन ? शारीरिक सदाचार, वाचिक सदाचार, और मानसिक सदाचार। ...

"शारीरिक, वाचिक और मानसिक दुराचारों को तथा दूसरे जो दोष हैं उन्हें भी छोड़ करके, पाप कर्म को न कर, बहुत पुण्य करके प्रज्ञावान् व्यक्ति शरीर छूटने पर स्वर्ग में पैदा होता है।"

७. तीन पवित्रतायें

भिक्षुओ ! ये तीन पवित्रतायें हैं। कौन तीन ? शारीरिक पवित्रता, वाचिक पवित्रता और मानसिक पवित्रता।...

"जो शारीरिक, वाचिक, और मानसिक पवित्रता से युक्त अनाश्रव (= चित्त-मल-रहित) है, उस पवित्रता से युक्त व्यक्ति को सर्वत्यागी कहते हैं।"

८. मौन-भाव

भिक्षुओ ! ये तीन मौन-भाव (= मौनेय) हैं। कौन तीन ? शारीरिक मौन-भाव, वाचिक मौन-भाव और मानसिक मौन-भाव।...

"शारीरिक, वाचिक और मानसिक मौनता से युक्त अनाश्रव मुनि पापों को नहाकर बहा दिया करते हैं।"

९. मार के बन्धन से मुक्त

भिक्षुओ ! जिस किसी का राग, द्वेष और मोह दूर नहीं हुआ है, भिक्षुओ ! इसे कहते हैं कि मार के बन्धन मे बँधा है, मार के जाल मे फँसा है और पापी मार के इच्छानुरूप करने योग्य है। भिक्षुओ ! जिस किसी का राग, द्वेष और मोह दूर हो गया है, भिक्षुओ ! इसे कहते हैं कि

वह मार के बन्धन से बँधा नहीं है, मार के जाल में फंसा नहीं है और पापी मार के इच्छानुरूप करने योग्य नहीं है।...

"जिसका राग, द्वेष और अविद्या दूर हो गई है, उस वैर-भाव तथा भय से रहित, श्रेष्ठ, तथागत भगवान् बुद्ध को सर्वस्यागी कहते हैं।"

१०. समुद्र के पार जाना

भिक्षुओ! जिस किसी भिक्षु, या भिक्षुणी का राग, द्वेष और मोह दूर नहीं हुआ है, भिक्षुओ इसे कहते हैं कि वह लहर, तरंग, भँवर, मगर और राक्षस-सहित समुद्र को नहीं पार किया। भिक्षुओ! जिस किसी भिक्षु या भिक्षुणी का राग, द्वेष और मोह दूर हो गया है, भिक्षुओ! इसे कहते हैं कि वह लहर, तरंग; भँवर, मगर और राक्षस-सहित समुद्र को तैर गया, पार कर लिया, वह ब्राह्मण (किनारे आकर) भूमि पर खड़ा हो गया।...

"जिसका राग, द्वेष और अविद्या दूर हो गई है, वह मगर, राक्षस और लहर सहित इस दुस्तर समुद्र को पार कर गया। वह सांसारिक आसक्ति-रहित, मृत्यु-त्यागी, बन्धन-मुक्त व्यक्ति फिर जन्म लेने के दुःख को दूर कर दिया। वह क्लेशों के अस्त हो जाने से अतुलनीय हो गया। उसने मृत्युराज को मूढ़ बना दिया—ऐसा मैं कहता हूँ।"

तीसरा वर्ग

१. मिथ्या धारणा से नरक

भिक्षुओ! मैंने देखा है कि जो प्राणी शारीरिक, वाचिक और मानसिक दुराचार से युक्त, आर्यों की निन्दा करने वाले, मिथ्या धारणा वाले

और मिथ्या धारणा से किये जाने वाले कामों को करने में लगे थे, वे शरीर छूटने पर....नरक में पैदा हुए। भिक्षुओ! इसे मैं दूसरे श्रमण या ब्राह्मण से सुनकर नहीं कहता हूँ....किन्तु भिक्षुओ! जिसे मैंने स्वयं जाना है, स्वयं देखा है, स्वयं विदित किया है, उसे ही मैं कहता हूँ।....

"इस छोटे से जीवन में मूर्ख, अल्पश्रुत और पुण्य न करने वाला व्यक्ति मिथ्या मन करके, मिथ्या वचन बोलकर तथा शरीर से भी मिथ्या काम करके शरीर छूटने पर नरक में पैदा होता है।"

२. सम्यक् दृष्टि से स्वर्ग

भिक्षुओ! मैंने देखा है कि जो प्राणी शारीरिक, वाचिक और मानसिक सदाचार से युक्त, आर्यों की निन्दा न करने वाले, सम्यक् दृष्टिवाले और सम्यक् दृष्टि से किये जाने वाले कामों को करने में लगे थे, वे शरीर छूटने पर स्वर्ग में पैदा हुए। भिक्षुओ! इसे मैं दूसरे श्रमण या ब्राह्मण से सुनकर नहीं कहता हूँ,...किन्तु भिक्षुओ! जिसे मैंने स्वयं जाना है, स्वयं देखा है, स्वयं विदित किया है, उसे ही मैं कहता हूँ।....

"इस छोटे से जीवन में प्रज्ञावान्, बहुश्रुत और पुण्य करने वाला व्यक्ति सम्यक् मन करके, सम्यक् वचन को बोलकर तथा शरीर से भी सम्यक् काम करके शरीर छूटने पर स्वर्ग में पैदा होता है।"

३. निस्तार

भिक्षुओ! ये तीन निस्तरण-धातुयें हैं। कौन तीन? कामों का निस्तरण नैष्कम्य है, रूपों का निस्तरण आरूप्य है और जो कुछ भूत, संस्कृत, प्रतीत्य-समुत्पन्न (= कार्य-कारण से उत्पन्न) है, उसका निस्तरण निरोध है।....

"कामों के निस्तरण और रूपों के अतिक्रमण को जान कर परिश्रमी (भिक्षु) सदा सभी संस्कारों के शमन (=निर्वाण) को पा लेता है। वह उनसे मुक्त होने के कारण समदर्शी भिक्षु है। उस अभिज्ञा-प्राप्त शान्त मुनि ने सांसारिक सभी बन्धनों को लाँघ दिया है।"

४· निर्वाण शान्ततर है

भिक्षुओ ! रूपों से अरूप शान्ततर हैं और अरूपों से निरोध (= निर्वाण) शान्ततर हैं।....

"जो रूप लोक में उत्पन्न प्राणी हैं और जो अरूप लोक में रहने वाले हैं, वे निर्वाण को न प्राप्त हो फिर जन्म लेते हैं। जो रूप-लोकों को त्याग, अरूप-लोक में स्थिर न हो, निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं, वे लोग मृत्यु को खत्म कर दिये हैं। अनाश्रव सम्यक् सम्बुद्ध काया से सांसारिक आसक्ति-रहित निर्वाण का स्पर्श कर, आसक्ति-त्याग को भली प्रकार साक्षात् कर शोक और राग-रहित पद (निर्वाण) का उपदेश देते हैं।"

५· तीन प्रकार के पुत्र

भिक्षुओ ! संसार में तीन प्रकार के पुत्र विद्यमान हैं। कौन तीन ? अतिजात, अनुजात और अवजात। भिक्षुओ ! कैसे अतिजात पुत्र होता है ? यहाँ भिक्षुओ ! पुत्र के माता-पिता बुद्ध, धर्म और संघ की शरण गए होते हैं, जीवहिंसा चोरी, व्यभिचार, असत्य-भाषण और सुरा-मेरय (=शराब) नशीली चीजों के सेवन से विरत नहीं होते हैं, दुराचारी और पापी होते हैं, किन्तु उनका पुत्र बुद्ध, धर्म और संघ की शरण गया होता है, जीवहिंसा, चोरी, व्यभिचार, असत्य-भाषण और सुरा-मेरय-नशीली चीजों के सेवन से विरत होता है, सदाचारी और पुण्यात्मा होता है। इस प्रकार भिक्षुओ ! अतिजात पुत्र होता है।"

भिक्षुओ ! कैसे अनुजात पुत्र होता है ? यहाँ भिक्षुओ ! पुत्र के माता-पिता बुद्ध, धर्म और संघ की शरण गये होते हैं, जीवहिंसा, चोरी, व्यभिचार, असत्य-भाषण और सुरा-मेरय-नशीली चीजों के सेवन से विरत होते हैं, सदाचारी और पुण्यात्मा होते हैं और उनका पुत्र भी बुद्ध, धर्म और संघ की शरण गया होता है...सदाचारी और पुण्यात्मा होता है। इस प्रकार भिक्षुओ ! अनुजात पुत्र होता है।...

भिक्षुओ ! कैसे अवजात पुत्र होता है ? यहाँ भिक्षुओ ! पुत्रके माता-पिता बुद्ध, धर्म और संघ की शरण गये होते हैं,....सदाचारी और पुण्यात्मा होते हैं, किन्तु उनका पुत्र बुद्ध, धर्म और संघ की शरण गया नहीं होता है,....दुराचारी और पापी होता है। इस प्रकार भिक्षुओ ! अवजात पुत्र होता है।...

"बुद्धिमान् अतिजात और अनुजात पुत्र की कामना करते हैं, किन्तु अवजात पुत्र की कामना नहीं करते, जो कि कुल का विनाश करने वाला होता है। इतने पुत्र संसार में हैं। जो उपासक श्रद्धा, शील से युक्त, उदार और कंजूसी से रहित होते हैं, वे घने बादल से मुक्त चन्द्रमा की भाँति सभाओं में सुशोभित होते हैं।"

६. तीन प्रकार के व्यक्ति

भिक्षुओ ! संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति हैं। कौन तीन ? अवृष्टि-सम, प्रदेश-वर्षी और सर्वत्र-वर्षी। कैसे भिक्षुओ ! व्यक्ति अवृष्टि-सम होता है ? यहाँ भिक्षुओ ! एक व्यक्ति किसी भी श्रमण, ब्राह्मण, निर्धन, पथिक, भिखारी और याचक को अन्न, पेय, वस्त्र, यान, मालागन्ध, आलेप, शय्या, आवास और प्रदीप देने वाला नहीं होता है। इस प्रकार भिक्षुओ ! व्यक्ति अवृष्टि-सम होता है।

कैसे भिक्षुओ ! व्यक्ति प्रदेश-वर्षी होता है ? यहाँ भिक्षुओ ! एक व्यक्ति किसी-किसी श्रमण, ब्राह्मण .. और याचक को अन्न, पेय .... और प्रदीप देने वाला होता है। इस प्रकार भिक्षुओ ! व्यक्ति प्रदेश वर्षी होता है।

कैसे भिक्षुओ ! व्यक्ति सर्वत्र-वर्षी होता है ? यहाँ भिक्षुओ ! एक व्यक्ति सभी श्रमण, ब्राह्मण और याचकों को देने वाला होता है। इस प्रकार भिक्षुओ ! व्यक्ति सर्वत्र वर्षी होता है।....

"जो श्रमण ब्राह्मण, निर्धन, पथिक और याचकों को पाकर अन्न, पेय और भोजन नहीं बाँटता है, वह अवृष्टि-सम है। उसे (बुद्धिमान् लोग) अधमपुरुष कहते हैं। जो किसी-किसी को नहीं देता है और किसी-किसी को देता है, वह प्रदेश-वर्षी है—ऐसा बुद्धिमान् लोग कहते हैं। जो पुरुष भिक्षा देने की वाणी बोलनेवाला होता है, सब प्राणियों पर अनुकम्पा करनेवाला होता है, प्रसन्न मन से बिखेरता है 'दो-दो' कहता है; जैसे कि बादल गड़गड़ाते और गरजते हुए बरसता है तथा पानी से ऊँची-ऊँची भूमि को भर देता है, इसी प्रकार यहाँ कोई वैसा व्यक्ति होता है, वह धर्म-पूर्वक परिश्रम से प्राप्त धन को जुटाकर भिखारी लोगों को अच्छी तरह अन्न और पेय से तृप्त करता है।"

७. शील-पालन से सुख

भिक्षुओ ! तीन सुखों को चाहने वाला बुद्धिमान् व्यक्ति शील का पालन करे। कौन तीन ? 'मेरी प्रशंसा हो' ऐसा चाहने वाला बुद्धिमान् व्यक्ति शील का पालन करे। 'मुझे भोग प्राप्त हों' ऐसा चाहने वाला बुद्धिमान् व्यक्ति शील का पालन करे। 'शरीर छूटने पर स्वर्ग-लोक में पैदा होऊँ' ऐसा चाहनेवाला बुद्धिमान् व्यक्ति शील का पालन करे।

"प्रशंसा, धन-लाभ और परलोक में स्वर्ग में आनन्द, इन तीन सुखों को चाहने वाला बुद्धिमान् शील का पालन करे। यदि पाप न

करते हुए भी (पाप) करनेवाले का साथ करता है, तो वह पाप-कर्म में सन्देहात्मक होता है, उसके लिये निन्दा लागू होती है। जो जैसी मैत्री करता है और जैसा साथ करता है, वह भी वैसा ही होता है, क्योंकि उसका साथ ही वैसा है। अच्छा व्यक्ति भी बुरे का साथ और लगाव रखते हुए वैसे ही बिगड़ जाता है जैसे कि विष से बुझे हुए बाणों के समूह में विष से नहीं बुझा हुआ बाण भी विष-युक्त हो जाता है। इसलिये बुद्धिमान् लगने के भय से बुरे मित्र का साथ न करे। जैसे सड़ी हुई मछली को जो कोई पुरुष कुश की नोक पर बाँधता है, तो कुश भी दुर्गन्धि बहाते हैं, ऐसा ही मूर्खों का साथ है। और, जो कोई पुरुष पलास में तगर को बाँधता है, तो उसकी पत्तियाँ भी सुगन्धि बहाती हैं, ऐसा ही बुद्धिमान् का साथ है। इसलिये पलास की पत्तियों में बाँधने के समान अपने फल को जानकर बुद्धिमान् दुर्जन का साथ न करें, केवल सत्पुरुष का साथ करे। दुर्जन नरक में ले जाते हैं और सत्पुरुष स्वर्ग पहुँचाते हैं।"

८. शरीर नाशवान् है

भिक्षुओ! यह शरीर नष्ट होनेवाला है, विज्ञान विनाश होनेवाला है और सभी सांसारिक आसक्तियां अनित्य, दुःख और परिवर्तनशील हैं।....

"शरीर को नष्ट होनेवाला, विज्ञान को विनाश होनेवाला और जन्म,मृत्यु में पड़े सांसारिक आसक्तियाँ को भय के तौर पर देखकर परम शांति को पा, भावितात्मा लोग समय की राह देखते हैं।"

९. स्वभाव के अनुसार ही मेल-जोल

भिक्षुओ! प्राणी स्वभाव के अनुसार दूसरे प्राणियों के साथ हिलते-मिलते हैं। नीच विचार के प्राणी नीच विचार के प्राणियों के साथ हिलते-मिलते हैं। उच्च विचार के प्राणी उच्च विचार के प्राणियों के साथ

हिलते-मिलते हैं। भिक्षुओ ! प्राचीन काल में भी प्राणी स्वभाव के अनुसार दूसरे प्राणियों के साथ हिले-मिले ...भिक्षुओ ! भविष्य काल में भी प्राणी स्वभाव के अनुसार दूसरे प्राणियों के साथ हिलेंगे-मिलेंगे........। भिक्षुओ ! इस समय वर्तमान काल में भी प्राणी स्वभाव के अनुसार दूसरे प्राणियों के साथ हिलते-मिलते हैं।....

"संसर्ग से क्लेश उत्पन्न होता है। अ-संसर्ग से दूर हो जाता है। थोड़े लकड़ी के बेड़े पर बैठकर जैसे महासमुद्र में डूब जाय, ऐसे ही आलसी के साथ से अच्छा आदमी भी बरबाद हो जाता है। इसलिए आलसी और अनुत्साही व्यक्ति को छोड़ दे। एकान्त-सेवी, आर्य, संयमी ध्यानी और नित्य उद्योग में लगे रहने वाले बुद्धिमान् के साथ रहे।"

१०. तीन हानिकर बातें

भिक्षुओ ! ये तीन बातें शैक्ष्य भिक्षु की हानि के लिए हैं। कौन तीन? भिक्षुओ! शैक्ष्य भिक्षु काम-धन्धे में ही विचरण करनेवाला, काम-धन्धे में रत और काम-धन्धे में विचरण करने में लगा हुआ होता है; बातचीत करने में ही विचरण करनेवाला, बातचीत में रत और बातचीत में विचरण करने में लगा हुआ होता है; निद्रा में ही विचरण करनेवाला, निद्रा में रत और निद्रा में विचरण करने में लगा हुआ होता है। भिक्षुओ ! ये तीन बातें शैक्ष्य भिक्षु की हानि के लिए हैं।

भिक्षुओ ! ये तीन बातें शैक्ष्य भिक्षु की अपरिहानि के लिए हैं। कौन तीन ? भिक्षुओ ! शैक्ष्य भिक्षु न काम-धन्धे में विचरण करने वाला.., न बातचीत करने में ही विचरण करनेवाला.., न निद्रा में ही विचरण करनेवाला... होता है। भिक्षुओ ! ये तीन बातें शैक्ष्य भिक्षु की अपरिहानि के लिए हैं।....

"काम-धन्धे में लगा, गप्पी, निद्रालु और चंचल—वैसा भिक्षु उत्तम सम्बोधि (=ज्ञान) को प्राप्त करने के लिए अयोग्य है। इसलिए थोड़े काम-धन्धेवाला, कम सोने वाला और चंचलता-रहित हो। वैसा भिक्षु उत्तम सम्बोधि को प्राप्त करने के लिए योग्य है।"

चौथा वर्ग

१. अकुशल वितर्क

भिक्षुओ! ये तीन अकुशल वितर्क हैं। कौन तीन? निन्दित न होने का वितर्क, लाभ-सत्कार-प्रशंसा का वितर्क और दूसरों की दया का वितर्क।....

"जो निन्दित होने और लाभ-सत्कार तथा गौरव प्राप्त करने के वितर्क से युक्त होता है, अमात्यों से समवेदना रखता है, वह संयोजनों (=सांसारिक बन्धनों) के क्षय से दूर है। जो पुत्र-पशु को छोड़, विवाह कराने से दूर और संग्रह-त्यागी है, वैसा भिक्षु उत्तम सम्बोधि को प्राप्त करने के योग्य है।"

२. नरक में पड़ते देखा है!

भिक्षुओ! मैंने सत्कार में पड़े, दबे हुए चित्त वाले प्राणियों को शरीर छूटने पर नरक में उत्पन्न हुआ देखा है। भिक्षुओ! मैंने असत्कार में पड़े, दबे हुए चित्त वाले प्राणियों को शरीर छूटने पर नरक में उत्पन्न हुआ देखा है। भिक्षुओ! मैंने सत्कार और असत्कार दोनों में पड़े, दबे हुए चित्तवाले प्राणियों को शरीर छूटने पर नरक में उत्पन्न हुआ देखा है। भिक्षुओ! इसे मैं दूसरे श्रमण या ब्राह्मण से सुनकर नहीं कहता

हूँ। ... भिक्षुओ! मैंने जो स्वयं जाना है, स्वयं देखा है, स्वयं विदित किया है, उसे ही मैं कहता हूँ।...

"सत्कार करने और असत्कार दोनों से जिसकी समाधि विचलित नहीं होती है, जो अप्रमाद के साथ विहरनेवाला है। उस सतत ध्यानी सूक्ष्म दृष्टि से विपश्यना करनेवाले, उपादानों को क्षय किये हुए व्यक्ति को सत्पुरुष कहा जाता है।"

३. देव-वाणियाँ

भिक्षुओ! देवताओं में समय-समय पर ये तीन प्रकार की देव-वाणियाँ हुआ करती हैं। कौन तीन? भिक्षुओ! जिस समय आर्यश्रावक केश-दाढ़ी मुड़ाकर काषाय वस्त्रों को पहन घर से बेघर हो प्रव्रजित होने का विचार करता है, भिक्षुओ! उस समय देवताओं में देववाणी होती है—'यह आर्यश्रावक मार के साथ संग्राम करने का विचार कर रहा है।' भिक्षुओ! यह पहली देववाणी देवताओं में समय-समय पर हुआ करती है।

और फिर, भिक्षुओ! जिस समय आर्यश्रावक सैंतिस (प्रकार के) "बोधि पाक्षिक"[१४] धर्मों की भावना में लगा विहरता है, भिक्षुओ! उस समय देवताओं में देववाणी होती है—'यह आर्यश्रावक मार के साथ संग्राम कर रहा है।' भिक्षुओ! यह दूसरी देववाणी देवताओं में समय-समय पर हुआ करती है।....

और फिर, भिक्षुओ! जिस समय आर्यश्रावक आश्रवों के नष्ट हो जाने से अनाश्रव चित्त-विमुक्ति और प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीर में स्वयं ज्ञान से साक्षात् कर प्राप्त हो विहरता है, भिक्षुओ! उस समय देवताओं में देववाणी होती है—'यह आर्यश्रावक संग्राम विजय कर लिया है

और उसी संग्राम-भूमि में विजय कर वास कर रहा है। भिक्षुओ यह तीसरी देववाणी देवताओं में समय-समय पर हुआ करती है।...

"संग्राम-विजयी, महान्, निर्भय सम्यक् सम्बुद्ध के शिष्य को देख-कर देवता भी नमस्कार करते हैं—'हे उत्तम पुरुष ! तुझे नमस्कार है, जो कि तूने दुर्जय को जीत लिया है तू मृत्यु की सेना को जीत निर्वाण प्राप्त हो बे-रोक हो गये हो। अर्हत् को देवता इस प्रकार नमस्कार करते हैं और चूँकि वह मृत्यु के वश में नहीं जाता, इसलिए देवता उसको नमस्कार करते हैं।"

४. देवता के च्युत होने के लक्षण

भिक्षुओ ! जब देवता देवलोक से च्युत होने वाला होता है, तब पाँच पूर्व-लक्षण (= निमित्त) प्रगट होते हैं—(१) मालाएँ कुम्हला जाती हैं, (२) वस्त्र गन्दे हो जाते हैं, (३) काँखों से पसीना चूने लगता है, (४) शरीर में कुरूपता आ जाती है, और (५) देवता अपने देव-आसन पर अभिरमण नहीं करता। भिक्षुओ ! तब देवता—"यह देवपुत्र च्युत होने वाला है" इस प्रकार जानकर तीन बातों से उसे आश्वासन देते हैं—"भो ! यहाँ से अच्छी गति को प्राप्त होओ, अच्छी गति को प्राप्त हो अच्छा लाभ प्राप्त करो, अच्छे लाभ को पा सुप्रतिष्ठित होओ।"

ऐसा कहने पर एक भिक्षु ने भगवान् से यह कहा—"भन्ते ! देव-ताओं को अच्छी गति प्राप्त करना क्या कहा जाता है ? भन्ते ! देवताओं को अच्छा लाभ प्राप्त करना क्या कहा जाता है ? भन्ते ! देवताओं को सुप्रतिष्ठित होना क्या कहा जाता है ?"

भिक्षु ! देवताओं को मनुष्य होकर उत्पन्न होना अच्छी गति प्राप्त करना कहा जाता है। जो कि मनुष्य होकर तथागत द्वारा बतलाए गए

धर्म-विनय में श्रद्धा प्राप्त करना है, भिक्षुओ ! यह देवताओं को अच्छा लाभ प्राप्त करना कहा जाता है। उसकी वह श्रद्धा चित्त में बैठी, जड़ पकड़ी, प्रतिष्ठित, दृढ़ और संसार में किसी भी श्रमण, ब्राह्मण, देवता मार या ब्रह्मा से कम नहीं की जाने वाली होती है, भिक्षुओ ! यह देवताओं को सुप्रतिष्ठित होना कहा जाता है।"

"जब देवता आयु के खत्म होने से देवलोक से च्युत होता है, तब देवताओं के आश्वासन के तीन प्रकार के शब्द निकलते हैं—'भो ! यहाँ से अच्छी गति को प्राप्त हो मनुष्यों की सहव्यता (= मनुष्य-योनि) में जाओ और मनुष्य होकर सद्धर्म में अनुत्तर श्रद्धा को प्राप्त करो। तेरी वह श्रद्धा चित्त में पैठी, जड़ पकड़ी और प्रतिष्ठित हो, जीवन-पर्यन्त भली प्रकार बतलाए गए सद्धर्म में कम होने वाली न हो। शारीरिक, वाचिक और मानसिक दुराचरों तथा अन्य जो दूसरे दोष हैं उन्हें छोड़, शरीर, वचन और मन से अप्रमाण परिशुद्ध बहुत पुण्य करके; तत्पश्चात् दान से भोग-सम्पत्ति पाने योग्य बहुत पुण्य कर, अन्य भी लोगों को सद्धर्म और ब्रह्मचर्य में लगाओ।" देवता जब च्युत होने वाले देवता को जानते हैं तब इस प्रकार अनुकम्पा करके आश्वासन देते हैं—'देव ! फिर आओ।'

५. बहुजन के हितैषी

ये तीन व्यक्ति संसार में उत्पन्न होते हुये बहुत लोगों के हित के लिए, बहुत लोगों के सुख के लिये, लोक पर अनुकम्पा करने के लिए तथा देव और मनुष्यों के हित-सुख के लिए उत्पन्न होते हैं। कौन तीन ? भिक्षुओ ! यहां तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्ध विद्या और आचरण से युक्त सुगत, लोक-विद्, अनुत्तर (= सर्वोत्तम), पुरुषों को दमन करने के लिए सारथी रूप, देव-मनुष्यों के शास्ता (मार्गोपदेष्टा), बुद्ध और

भगवान् संसार में उत्पन्न होते हैं। वह आरम्भ, मध्य और अन्त में कल्याण-कर धर्म का उसके शब्दों और भावों रहित सर्वांश में परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य को प्रकाशित करते हैं। भिक्षुओ! यह पहला व्यक्ति है, जो संसार में उत्पन्न होते हुए बहुत लोगों के हित के लिए.... उत्पन्न होता।

और फिर, भिक्षुओ! उसी शास्ता का शिष्य अर्हत्, क्षीणाश्रव, ब्रह्मचर्यपूर्ण, कृतकृत्य, उतरे-भार, अपने मतलब को प्राप्त, सांसारिक बन्धनों से रहित और भली प्रकार जानकर विमुक्त हो गया होता है। वह आरम्भ, मध्य और अन्त में कल्याणकर धर्म...को प्रकाशित करता है। भिक्षुओ! यह दूसरा व्यक्ति है....।

और फिर, भिक्षुओ! उसी शास्ता का शिष्य शैक्ष्य, आर्य-मार्ग में चलनेवाला, बहुश्रुत और शील-व्रत से युक्त होता है। वह भी आरम्भ मध्य और अन्त में कल्याणकर धर्म...को प्रकाशित करता है। भिक्षुओ! यह तीसरा व्यक्ति है....।....

"महर्षि शास्ता संसार में प्रथम (व्यक्ति) हैं, (दूसरा) उनका अनुगामी संयमी शिष्य और (तीसरा) आर्य-मार्ग में चलनेवाला, शैक्ष्य, बहुश्रुत और शील-व्रत से युक्त (शिष्य) है। ये तीनों देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ सूर्य समान हैं। वे धर्मोपदेश देते हुये निर्वाण के द्वार को खोल देते हैं और बहुत लोगों के बन्धन को खोल देते हैं। जो सुगत (=बुद्ध) के शासन (=धर्म) में प्रमाद रहित हो, अनुत्तर सार्थवाह (=बुद्ध) द्वारा बतलाये गये मार्ग में चलते हैं, वे यहीं दुःख का अन्त कर डालते हैं।"

६. अशुभ-भावना

भिक्षुओ! काया में अशुभानुपश्यी (=अशुभ होने का मनन करना) होकर विहरो, तुम्हारे भीतर अनापानसति (=आश्वास-प्रश्वास

में स्मृति बनाये रखना) सामने सुप्रतिष्ठित हो और सब संस्कारों में अनित्यानुपश्यी (=अनित्य होने का मनन करना) होकर विहरो। भिक्षुओ ! काया में अशुभानुपश्यी विहरनेवालों को जो सुन्दरता सम्बन्धी राग की आसक्ति होती है, वह दूर हो जाती है। आनापानसति के भीतर सामने सुप्रतिष्ठित होने से जो बाहरी दुःखदायी मिथ्या वितर्क होते हैं, वे नहीं होते हैं। सब संस्कारों में अनित्यानुपश्यी होकर विहरने वालों को जो अविद्या होती है, वह दूर हो जाती है, जो विद्या है, वह उत्पन्न होती है।

"जो सदा काया में अशुभ का विचार करने वाला है, आनापान में स्मृति बनाये रहनेवाला है और सब संस्कारों के शमन को देखने वाला परिश्रमी (भिक्षु) है, वह भिक्षु समदर्शी है, क्योंकि उससे वह मुक्त है। उस अभिज्ञा-प्राप्त शान्त मुनि ने सांसारिक सभी बन्धनों को को लाँघ दिया है।"

७. धार्मिक के लक्षण

धर्म के अनुसार चलने वाले भिक्षु का बातचीत करने में यह स्वभाव होता है कि वह बातचीत करते हुए धर्म ही कहता है, अधर्म नहीं। वितर्क करते हुये धार्मिक वितर्क ही कहता है अधार्मिक वितर्क नहीं अथवा दोनों को ही छोड़ कर स्मृति और सम्प्रजन्य (=ज्ञान) युक्त उपेक्षक हो विहरता है।

"धर्म में विहरनेवाला, धर्म में रत, धर्म का भली प्रकार विचार करनेवाला, तथा धर्म का स्मरण करने वाला भिक्षु सद्धर्म से च्युत नहीं होता। चलते, खड़े बैठे, या सोये अपने चित्त को शान्त करते हुए (परम) शान्ति को पा ही लेता है"

८. अच्छे-बुरे वितर्क

भिक्षुओ ! ये तीन अकुशल-वितर्क अन्धकार देनेवाले, बिना आँख का बना देने वाले, अज्ञानी बनानेवाले, प्रज्ञा को रोकनेवाले, हानि पहुँचाने वाले और निर्वाण की ओर नहीं ले जानेवाले हैं। कौन तीन ? भिक्षुओ ! काम-वितर्क ......व्यापाद (= द्रोह)-वितर्क... विहिंसा (=प्रतिहिंसा)-वितर्क ..।....

भिक्षुओ ! ये तीन कुशल वितर्क न अन्धा करनेवाले, न बिना आँख का बनानेवाले, ज्ञानी बनानेवाले, प्रज्ञा बढ़ानेवाले, हानि न पहुँचानेवाले और निर्वाण की ओर ले जाने वाले हैं। कौन तीन ? भिक्षुओ ! नैष्क्रम्य (=निष्कामता)-वितर्क...., अ-व्यापाद-वितर्क..., अ-विहिंसा-वितर्क....।....

"तीन कुशल वितर्कों को करे, तीन अकुशल वितर्कों को छोड़ दे। उठी हुई धूल को जिस प्रकार वृष्टि शान्त कर देती है, उसी प्रकार अकुशल वितर्कों और बुरे विचारों को दबा दे। ऐसा करनेवाला व्यक्ति चित्त से वितर्कों को शान्त कर यहीं शान्तिपद को पा लेता है।"

९. ये भीतरी शत्रु हैं !

भिक्षुओ ! ये तीन भीतरी मल, भीतरी शत्रु, भीतरी वैरी, भीतरी हत्यारे और भीतरी खिलाफत करनेवाले हैं। कौन तीन ? भिक्षुओ ! लोभ....,द्वेष...., मोह....।....

"लोभ अनर्थ उत्पन्न करनेवाला है, लोभ चित्त को बिगाड़नेवाला है, अपने भीतर ही उत्पन्न भय को लोग नहीं जान पाते हैं। लोभी हित को नहीं जानता है, लोभी धर्म को नहीं देखता है। जिस मनुष्य को लोभ अपने वश में कर लेता है, वह उस समय बिल्कुल अन्धा हो जाता

है। जो लोभ को छोड़ कर लुभानेवाली चीजों में लोभ नहीं करता है, उससे लोभ उसी प्रकार दूर हो जाता है, जैसे कि पुरइन के पत्ते से पानी की बूँद।

"द्वेष अनर्थ उत्पन्न करनेवाला है, द्वेषी चित्त को बिगाड़नेवाला है। अपने ही भीतर उत्पन्न भय को लोग नहीं जान पाते हैं। द्वेषी हित को नहीं जानता है, द्वेषी कर्म को नहीं देखता है। जिस मनुष्य को द्वेष अपने वश में कर लेता है वह उस समय बिल्कुल अन्धा हो जाता है। जो द्वेष को छोड़कर दूषित करनेवाली चीजों में द्वेष नहीं करता है, उससे द्वेष उसी प्रकार दूर हो जाता है, जैसे कि पका हुआ ताड़ का फल भेंटी से।

"मोह अनर्थ उत्पन्न करनेवाला है, मोह चित्त को बिगाड़ने वाला है। अपने ही भीतर उत्पन्न भय को लोग नहीं जान पाते हैं। मोहित हित को नहीं जानता है, मोहित धर्म को नहीं देखता है। जिस मनुष्य को मोह अपने वश में कर लेता है, वह उस समय बिल्कुल अन्धा हो जाता है। जो मोह को छोड़ कर मोहित करनेवाली चीजों में मोह नहीं करता है, वह उसी प्रकार मोह का नाश कर देता है जैसे कि सूर्य उदय होते हुए सारे अन्धकार को।"

१०. देवदत्त नारकीय है!

भिक्षुओ! तीन बुरी बातों से पछाड़ा गया, उनसे पकड़े गए चित्त-वाला देवदत्त अपाय में पड़नेवाला, नारकीय, कल्पस्थायी और असाध्य है। किन तीन से? बुरी इच्छा से .., बुरे मित्रों के साथ से..., और आगे करणीय होने पर भी अल्प-विशेषता की प्राप्ति से बीच में ही प्रयत्न करना छोड़ देने से।....

"मत कोई संसार में बुरी इच्छावाला उत्पन्न हो, उसे ऐसे भी जानो, जैसे बुरी इच्छावालों की गति होती है। ऐसा मैंने सुना कि देवदत्त

'पण्डित' प्रसिद्ध था, 'संयमी' माना जाता था, और यश से जाज्वल्यमान था। वह प्रमादी हो तथागत को पीड़ित कर चार द्वारों वाले भयानक अवीचि-नरक[१५] में पड़ा। जो पापकर्म नहीं करनेवाले निर्दोष को दोष लगाता है, तो पाप उसी बुरे चित्तवाले घृणित व्यक्ति को लगता है। जो विष के घड़े से समुद्र का दूषित करना चाहता है, तो वह उससे दूषित नहीं कर सकता, क्योंकि समुद्र बहुत बड़ा है। ऐसे ही जो तथागत को दोष से पीड़ित करता है, तो उस श्रेष्ठ, शान्तचित्त को दोष लागू नहीं होता। वैसे व्यक्ति की मित्रता करे और उसका साथ करे, जिसका अनुसरण करनेवाला भिक्षु दुःख का अन्त पा ले।"

पाँचवाँ वर्ग

१. तीन अग्रप्रसाद

भिक्षुओ ! ये तीन अग्र-प्रसाद हैं। कौन तीन ? भिक्षुओ ! बिना पैरवाले, दो पैरवाले, चार पैरवाले, रूपी, अरूपी, संज्ञावान, असंज्ञावान अथवा न संज्ञावाले न असंज्ञावाले जितने भी प्राणी हैं, उनमें तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्ध अग्र (= श्रेष्ठ) कहे जाते हैं। भिक्षुओ ! जो बुद्ध में प्रसन्न हैं, वे अग्र में प्रसन्न हैं और अग्र में प्रसन्न का फल भी अग्र होता है।

भिक्षुओ ! संस्कृत या असंस्कृत जितने भी धर्म हैं, उनमें विराग अग्र कहा जाता है, जोकि यह मद का मर्दन, प्यास का बुझना, आसक्ति का खत्म होना, आवागमन का नष्ट होना, तृष्णा का क्षय, विराग, निरोध और निर्वाण है। भिक्षुओ ! जो विराग-धर्म में प्रसन्न हैं, वे अग्र में प्रसन्न हैं और अग्र में प्रसन्न का फल भी अग्र होता है।

भिक्षुओ ! जितने संघ या गण हैं, उनमें तथागत का श्रावक-संघ अग्र कहा जाता है जो कि यह चार पुरुष-जोड़े (= १—स्रोतापत्ति-मार्गस्थ, स्रोतापत्ति-फलस्थ, २—सकृदागामी मार्गस्थ, सकृदागामी-फलस्थ, ३—अनागामी-मार्गस्थ, अनागामी-फलस्थ, ४—अर्हत्-मार्गस्थ, अर्हत्-फलस्थ), आठ पुरुष = पुद्गल (= आठ आर्य व्यक्ति) हैं—यह भगवान् का श्रावक-संघ है, जो कि आह्वानीय है, पाहुन बनाने योग्य है, दक्षिणा देने योग्य है, हाथ जोड़ने योग्य है और संसार के लिए अनुपम पुण्य का खेत है। भिक्षुओ ! जो संघ में प्रसन्न हैं वे अग्र में प्रसन्न हैं और अग्र में प्रसन्न का फल भी अग्र होता है। भिक्षुओ ये तीन अग्र-प्रसाद हैं।...

"जो अग्र में प्रसन्न हैं और अग्र धर्म को जानते हैं। अनुपम दक्षिणा देने योग्य अग्र बुद्ध में प्रसन्न हैं, विराग, शान्ति और सुख (—दायक) अग्र धर्म में प्रसन्न हैं तथा अनुपम पुण्य के खेत अग्र-संघ में प्रसन्न हैं, (ऐसे) (अग्र = श्रेष्ठ) में दान देते हुए उनका अग्र पुण्य बढ़ता है। वे अग्र आयु, वर्ण (= रूप), यश, कीर्ति, सुख और बल को प्राप्त होते हैं। अग्र का दाता, अग्र धर्मों से युक्त, बुद्धिमान् देवता या मनुष्य हो अग्र को प्राप्त कर प्रमोद करता है।

२. लोहे का तप्त गोला खाना उत्तम है!

भिक्षुओ ! भीख माँगकर खाना सभी पेशाओं में गया-गुजरा है। भिक्षुओ ! संसार में यह डाँटने का तरीका है—'हाथ में बर्तन लेकर भीख माँग रहे हो ?' भिक्षुओ ! कुलपुत्र अपनी भलाई चाहनेवाले, अपनी भलाई देखते हुए उसे ही करते हैं। वे राजा की जेल से भागे हुए नहीं हैं, चोरों के हाथ से छूटे हुए नहीं हैं, ऋण के डर से घर छोड़ कर भागे हुए नहीं हैं, भय से भागे हुए नहीं हैं और न तो वह उनका पेशा ही है। बल्कि भिक्षुओ ! कुलपुत्र ऐसा सोचकर प्रव्रजित हुआ है—"हम लोग

जन्म, बुढ़ापा, मृत्यु, शोक, विलाप, दुःख, दौर्मनस्य और परेशानी में उतरे हैं, दुःख में पड़े हैं, दुःख में लीन हैं, सम्भव है इस सारे दुःख-समूह का अन्त दिखाई दे।" किन्तु जब वह लोभी, कामभोग में तीव्र रागवाला, द्रोह चित्तवाला, बुरे संकल्प वाला, स्मृति-रहित, निष्प्रज्ञ, एकाग्रता-रहित, इधर-उधर मन दौड़ाने वाला और इन्द्रियों में असंयमी होता है, जैसे भिक्षुओ! दोनों ओर से जली बीच में गूथ (= गूह) लगी मुर्दाघाटी की लकड़ी न गाँव में लकड़ी के काम में आती है और न तो जंगल में ही। वैसा ही भिक्षुओ! मैं इस व्यक्ति को कहता हूँ, वह गृहस्थ-जीवन के भोग-विलास से वंचित हो गया और श्रामण्य को भी नहीं पूर्ण कर रहा है।

"गृहस्थ-जीवन के भोग-विलास से वंचित हो गया और श्रामण्य को भी नहीं पूर्ण कर रहा है। वह मुर्दाघाटी की लकड़ी की भाँति पतित होते हुए बिखर कर नष्ट हो जाता है। असंयमी दुराचारी हो देश का अन्न खाने से अग्नि-शिखा के समान तप्त लोहे का गोला खाना उत्तम है।"

३. वह मुझसे दूर ही है

भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु मेरी संघाटी के कोनों को पकड़े पैर पर पैर रखते पीछे लगा हो, किन्तु वह हो लोभी, कामभोग में तीव्रराग वाला, द्रोह चित्तवाला, बुरे संकल्प वाला, स्मृति-रहित, निष्प्रज्ञ, एकाग्रता-रहित, इधर-उधर मन दौड़ाने वाला और इन्द्रियों में असंयमी; तो वह मुझसे दूर ही है और मैं भी उससे। सो किस कारण? भिक्षुओ! वह भिक्षु धर्म नहीं देखता है, वह धर्म देखते हुए मुझे नहीं देखता है। यदि भिक्षुओ! सौ योजन पर भी भिक्षु विहार करे और वह हो निर्लोभी, काम-भोग में न तीव्र रागवाला, न द्रोह चित्त वाला, न बुरे संकल्पवाला, उपस्थित हुई स्मृतिवाला, संप्रज्ञ, एकाग्र, इधर-उधर मन न दौड़ाने वाला

और इन्द्रियों में संयमी; तो वह मेरे पास ही है और मैं भी उसके। सो किस कारण? भिक्षुओ! वह भिक्षु धर्म देखता है, धर्म देखते हुए मुझे देखता है।

"यदि कोई बड़ी इच्छावाला, द्रोही, तृष्णा का अनुगामी, अ-शान्त और लोभी तृष्णा-रहित, शान्त और निर्लोभी (तथागत) के पीछे-पीछे लगा हो, तो भी देखो वह कितना दूर है! किन्तु जो बुद्धिमान् धर्म का ज्ञान प्राप्त कर, धर्म को जान शान्त जलाशय के समान तृष्णा-रहित, शान्त और निर्लोभी वितृष्ण, शान्त और निर्लोभी (तथागत) के पीछे-पीछे लगा हुआ, देखो कितना समीप है!"

४. तीन अग्नियाँ

भिक्षुओ! ये तीन अग्नियाँ हैं। कौन तीन? रागाग्नि, द्वेषाग्नि और मोहाग्नि।....

'रागाग्नि काम-भोगों में आसक्त और मूर्छित लोगों को जलाता है। दोषाग्नि जीवहिंसक द्रोही लोगों को और मोहाग्नि आर्य-धर्म में अ-दक्ष मूढ़ों को। इतने अग्नियों को न जानने वाले सत्काय में पड़े नरक, पशु-योनि, असुर (-योनि), और प्रेत्य-विषय (= भूत प्रेत) को बढ़ाते हैं (= बार-बार इन योनियों, में उत्पन्न होते हैं)। वे मार के बन्धन से नहीं छूटते हैं। जो रात-दिन समयक् सम्बुद्ध के धर्म में लगे रहते हैं, अशुभ-संज्ञावाले होकर रागाग्नि को शान्त कर देते हैं। द्वेषाग्नि को उत्तम पुरुष मैत्री (-भावना) से शान्त करते हैं और मोहाग्नि को प्रज्ञा से, जो कि निर्वाण की ओर ले जाने वाली है। वे रातों-दिन सतर्क रहनेवाले चतुर लोग इन्हें शान्त कर सारे दुःखों का नाश कर सब प्रकार से शान्त हो जाते हैं। आर्य-दर्शी (= आर्य-सत्यों को देखनेवाले), ज्ञानी, भली प्रकार जान कर पण्डित हुए, जन्म के क्षय होने को जान फिर जन्म नहीं लेते।

५. चक्कर रुक गया !

भिक्षुओ ! भिक्षु वैसे-वैसे विमर्ष करे, जैसे-जैसे विमर्ष करते हुए उसका विज्ञान बाहर (रूप आदि आलम्बनों में) एकाग्र और चंचलता-रहित हो आलम्बनों में लगा रहे, आसक्तियों में न पड़े, और फिर जन्म, बुढ़ापा, मृत्यु तथा दुःख के उत्पन्न होने की सम्भावना न हो ।

"सात संगों* से रहित, तृष्णा को नष्ट किए हुए भिक्षु का बार-बार जन्म लेने का चक्कर समाप्त हो गया, उसे फिर जन्म नहीं लेना । "

६. काम की उत्पत्तियाँ

भिक्षुओ ! ये तीन काम की उत्पत्तियाँ हैं। कौन तीन ? उपस्थित कामवाले†, निर्माणरति और परिनिर्मितवशवर्ती ।...

"जो उपस्थित काम (-भोग) वाले हैं और जो वशवर्ती देव हैं। निर्माणरति देव तथा दूसरे भी जो काम-भोगी हैं, वे उत्पत्ति और मृत्यु से नहीं छूटते । बुद्धिमान् स्वर्गीय या मानुषी जो काम-भोगी हैं, उन सबको छोड़ दे । प्रिय और लुभावने रूपों के रागरूपी स्रोत को काटकर जिसे कि लाँघना कठिन है, सारे दुःखों का नाश कर सब प्रकार से शान्त हो जाते हैं । आर्य-दर्शी, ज्ञानी, भली प्रकार जानकर पण्डित हुए, जन्म के क्षय होने को जान फिर जन्म नहीं लेते ।"

७. वे संसार पार हो गये हैं !

भिक्षुओ ! काम-भोग और भव के बन्धन में बँधा, व्यक्ति इस संसार में फिर आने वाला होता है । भिक्षुओ ! काम भोग और भव के बन्धन

---

* ये सात संग हैं—तृष्णा, दृष्टि, मान, क्रोध, अविद्या, क्लेश और दुश्चरित्र ।

† मनुष्यों और चातुर्महाराजिक देवों से चार देवलोकों को उपस्थित-काम कहा जाता है ।

से मुक्त व्यक्ति फिर इस संसार में आनेवाला नहीं होता है। भिक्षुओ! कामभोग और भव के बन्धन से मुक्त क्षीणाश्रव अर्हत् होता है।

"प्राणी काम और भव दोनों के बन्धनों से बँधे संसार में जन्म और मृत्यु के चक्कर में पड़े रहते हैं। जो कामभोगों को त्याग दिये हैं किन्तु आश्रवों का क्षय नहीं किये हैं तथा भव-बन्धन से युक्त हैं, वे 'अनागामी' कहे जाते हैं। और जो सन्देह-रहित हैं फिर जन्म लेनेवाले नहीं हैं तथा जिन्होंने आश्रय-क्षय (=निर्वाण) को प्राप्त कर लिया है, वे ही संसार पार हो गये हैं।"

८. उत्तम पुरुष कौन है?

भिक्षुओ! सुन्दर शीलों से युक्त, अच्छे धर्मों को करनेवाला, उत्तम प्रज्ञावाला भिक्षु इस धर्म-विनय में केवली (=अर्हत्) ब्रह्मचर्य-वास किया हुआ, उत्तम पुरुष कहा जाता है। कैसे भिक्षुओ! भिक्षु सुन्दर शीलों से युक्त होता है? भिक्षुओ! यहाँ भिक्षु शीलवान् होता है, प्रातिमोक्ष के नियमों का भली प्रकार पालन करनेवाला होता है, आचार-गोचर से युक्त हो अल्प-मात्र के दोषों में भी भय देखता शिक्षा-पदों को पालन करने का अभ्यास करता है। भिक्षुओ! इस प्रकार भिक्षु सुन्दर शीलों से युक्त होता है।

कैसे अच्छे धर्मों को पालन करनेवाला होता है? भिक्षुओ! यहाँ सैंतिस (प्रकार के) बोधि-पाक्षिक धर्मों की भावना में लगा होता है।...

कैसे उत्तम प्रज्ञावाला होता है? भिक्षुओ! यहाँ भिक्षु आश्रवों के क्षय से अनाश्रव चित्त की विमुक्ति और प्रज्ञा की विमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं अभिज्ञा से साक्षात् कर प्राप्त हो विहरता है।....

"जो शरीर, वचन और मन से दुष्कृत नहीं करता है, वैसे लज्जाशील भिक्षु को सुन्दर शीलों से युक्त कहा जाता है। जिसने सम्बोधि-प्राप्ति की ओर ले जानेवाले धर्मों की भली प्रकार भावना की है, वैसे राग-रहित भिक्षु को अच्छे धर्मों को करनेवाला कहते हैं। जो यहीं अपने दुःखों के क्षय को जान लेता है, वैसे अनाश्रव भिक्षु को उत्तम प्रज्ञा वाला कहते हैं। उन धर्मों से युक्त, निष्पाप, संशय-रहित और सारे लोक में अनासक्त (भिक्षु) को सर्वत्यागी कहते हैं।"

९. धर्मदान श्रेष्ठ है

भिक्षुओ ! ये दो दान हैं—आमिष-दान और धर्म-दान। भिक्षुओ ! इन दोनों में धर्मदान श्रेष्ठ है। भिक्षुओ ! ये दो संविभाग (= बाँटकर उपभोग करना) हैं—आमिष-संविभाग और धर्म-संविभाग। भिक्षुओ ! इन दोनों संविभागों में धर्म-संविभाग श्रेष्ठ है। भिक्षुओ ये दो अनुग्रह हैं—आमिष-अनुग्रह और धर्म-अनुग्रह। भिक्षुओ ! इन दोनों अनुग्रहों में धर्म-अनुग्रह श्रेष्ठ है।

"जिस दान को उत्तम और सर्वश्रेष्ठ कहकर भगवान् ने प्रशंसा की है, उसे समय पर अग्र-क्षेत्र में प्रसन्न-चित्त हो कौन जाननेवाला बुद्धिमान् नहीं देगा ? बुद्ध के धर्म में जो कहते और सुनते हैं, जो प्रमाद नहीं करते, उनका परमार्थ विशुद्ध होता है।"

१०. त्रैविद्य ब्राह्मण कौन है ?

भिक्षुओ ! मैं धर्म से ही त्रैविद्य ब्राह्मण को बतलाता हूँ, न दूसरे को कहने-सुनने मात्र से। भिक्षुओ ! कैसे मैं धर्म से ही त्रैविद्य ब्राह्मण को बतलाता हूँ ? यहाँ भिक्षुओ ! भिक्षु अनेक प्रकार से पूर्वजन्मों की

बातों को स्मरण करता है। जैसे, एक जन्म, दो...., तीन...., चार...., पाँच..., दस...., बीस...., तीस ..., चालीस , पचास...., सौ..., हजार...., लाख...., अनेक संवर्त (=प्रलय)-विवर्त (=सृष्टि) कल्पों (को जानता है)—"मैं वहाँ था, इस नामवाला, इस गोत्रवाला, इस रंग का, इस आहार (=भोजन) को खानेवाला, इतनी आयु वाला था। मैंने इस प्रकार के सुख और दुःख का अनुभव किया। सो मैं वहाँ से मरकर वहाँ उत्पन्न हुआ, इस नाम वाला...। सो मैं वहाँ से मरकर यहाँ उत्पन्न हुआ।" इस तरह आकार-प्रकार के साथ वह अनेक पूर्वजन्मों को स्मरण करता है। यह उसे पहली विद्या मिल गई होती है, अविद्या नष्ट हो गई होती है, विद्या उत्पन्न हो गई होती है। अन्धकार नष्ट हो गया होता है और आलोक उत्पन्न हो गया होता है, क्योंकि वह अप्रमादी, परिश्रमी एवं संयमी होकर विहरने वाला है।

और फिर, भिक्षुओ! भिक्षु शुद्ध और अलौकिक दिव्य चक्षु से मरते, उत्पन्न होते, हीन अवस्था में आये, अच्छी अवस्था में आए, अच्छे वर्ण (=रंग) वाले, बुरे वर्ण वाले, अच्छी गति को प्राप्त, बुरीगति को प्राप्त, अपने-अपने कर्म के अनुसार अवस्था को प्राप्त, प्राणियों को जान लेत है—ये प्राणी शरीर से दुराचरण, वचन से दुराचरण और मन से दुराचरण करते हुए साधुपुरुषों की निन्दा करते थे, मिथ्या-दृष्टि (=बुरे सिद्धान्त) रखते थे। बुरी धारणा के काम करते थे। अब वह मरने के बाद नरक और दुर्गति को प्राप्त हुए हैं और यह दूसरे प्राणी शरीर, वचन और मन से सदाचार करते, साधुजनों की प्रशंसा करते, ठीक धारणावाले, ठीक धारणा के अनुकूल आचरण करते थे; सो अब अच्छी गति और स्वर्ग प्राप्त हुये हैं। इस तरह शुद्ध अलौकिक दिव्य चक्षु से .. जान लेता है। यह उसे दूसरी विद्या मिल गई होती है। ...

और फिर, भिक्षुओ! भिक्षु आश्रवों के क्षय से अनाश्रव चित्त की विमुक्ति और प्रज्ञा की विमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं ज्ञान से साक्षात्

कर प्राप्त हो विहरता है। यह उसे तीसरी विद्या मिल गई होती है।...

"जो पूर्व जन्म को जानता है, स्वर्ग और नरक को जिसने देख लिया है, जिसका जन्म क्षीण हो चुका है, जिसकी प्रज्ञा पूर्ण हो चुकी है, इन तीनों विद्याओं से 'त्रैविद्य ब्राह्मण' होता है। उसे ही मैं त्रैविद्य कहता हूँ, दूसरे को कहने-सुनने मात्र से नहीं।"

चौथा निपात

१. बुद्ध अनुत्तर वैद्य हैं

भिक्षुओ ! मैं ब्राह्मण (= निष्पाप), याचनीय, सदा खुले हाथ देने वाला, अन्तिम शरीरधारी और अनुत्तर शल्यकर्त्ता (= ऑपरेशन करने वाला) वैद्य हूँ। तुम लोग मेरे औरस, मुख से उत्पन्न, धर्मज, धर्म-मिर्मित, धर्म-दायाद (= उत्तराधिकारी) पुत्र हो, आमिष-दायाद नहीं। भिक्षुओ ! ये दो दान हैं—आमिष-दान और धर्मदान... (३. ५. ६ जैसा)....। आमिष-संविभाग और धर्म-संविभाग ।....आमिष अनुग्रह और धर्म अनुग्रह ...। ...भिक्षुओ ! ये दो याग (= यज्ञ) हैं—आमिष-याग और धर्म-याग। भिक्षुओ ! इन दोनों यागों में धर्म-याग श्रेष्ठ है।....

"सब प्राणियों पर अनुकम्पा करनेवाले उदार तथागत ने जो धर्म-याग किया, वैसे देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ, संसार को पार किए हुए (भगवान्) को प्राणी नमस्कार करते हैं।"

२ चार सुलभ चीज़ें

भिक्षुओ ! ये चार अल्प, सुलभ और निर्दोष हैं। कौन चार ? भिक्षुओ ! पांशुकूल चीवर (= मार्ग आदि में गिरे हुये वस्त्र-खण्डों को

सीकर बनाया हुआ चीवर), भिक्षा माँगकर खाना..., वृक्ष-मूल (= पेड़ों के नीचे रहना), पूतिमूत्र (= गो-मूत्र) । भिक्षुओ ! जब भिक्षु अल्प और सुलभ से सन्तुष्ट होता है, तो उसका यह एक श्रामण्य अंग होता है—ऐसा मैं कहता हूँ ।...

"जो निर्दोष, अल्प और सुलभ से सन्तुष्ट है, शयन आसन, चीवर और खाने-पीने के लिए जिसे चित्त में परेशानी नहीं है, जो दिशाओं में नहीं ठकराता (अर्थात् सन्तुष्ट होता है), तो श्रमण-भाव के अनुरूप जो धर्म बतलाये गये हैं, वे उस सन्तुष्ट, अप्रमादी भिक्षु को प्राप्त होते हैं ।"

३. आश्रवों का क्षय कैसे ?

भिक्षुओ ! मैं जानने और देखनेवाले के लिए ही आश्रवों का क्षय कहता हूँ, न जानने और न देखनेवाले के लिए नहीं । भिक्षुओ ! क्या जानने वाले और क्या देखनेवाले के आश्रवों का क्षय होता है ! भिक्षुओ ! 'यह दुःख है' जानने और देखनेवाले के आश्रवों का क्षय होता है, 'यह दुःख-समुदय है'...., 'यह दुःख का निरोध है'... 'यह दुःख-निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है'...। भिक्षुओ ! इस प्रकार जानने और देखने वाले के आश्रवों का क्षय होता है ।

"सीधे मार्ग पर चलने वाले, अभ्यासशील शैक्ष्य को अर्हत् मार्ग में प्रथम ज्ञान होता है, उसके बाद अर्हत्वज्ञान और तत्पश्चात् अर्हत्व-फल से (प्रज्ञा-) विमुक्ति का उत्तम ज्ञान होता है 'और सारे बन्धन क्षीण हो गए' ऐसा क्लेशों के क्षय होने का ज्ञान उत्पन्न होता है । सभी ग्रन्थियों (= गाँठों) को खोलनेवाला निर्वाण आलसी, मूर्ख और न जाननेवाले द्वारा नहीं पाया जा सकता ।"

४. वे ही असली श्रमण हैं

भिक्षुओ! जो कोई श्रमण या ब्राह्मण 'यह दुःख है' यथार्थ नहीं जानते हैं, 'यह दुःख-समुदय है' यथार्थ नहीं जानते हैं, 'यह दुःख निरोध है' यथार्थ नहीं जानते हैं, 'यह दुःख-निरोध की ओर ले जानेवाला मार्ग है, यथार्थ नहीं जानते हैं, भिक्षुओ! वे श्रमण या ब्राह्मण श्रमणों में श्रमण या ब्राह्मणों में ब्राह्मण नहीं माने जाते हैं और वे आयुष्मान् न तो इसी जन्म में श्रामण्य-फल या ब्राह्मण्य-फल को स्वयं ज्ञान से साक्षात् कर, प्राप्त हो विहरते हैं। भिक्षुओ! जो कोई श्रमण या ब्राह्मण 'यह दुःख है' यथार्थ जानते हैं, 'यह दुःख-समुदय है' यथार्थ जानते हैं, 'यह दुःख-निरोध है, यथार्थ जानते हैं, 'यह दुःख निरोधकी ओर ले जाने वाला मार्ग है, यथार्थ जानते हैं, भिक्षुओ! वे श्रमण या ब्राह्मण श्रमणों में श्रमण या ब्राह्मणों में ब्राह्मण माने जाते हैं और वे आयुष्मान् इसी जन्म में श्रामण्य-फल को स्वयं ज्ञान से साक्षात् कर, प्राप्त हो विहरते हैं।

"जो दुःख और दुःख की उत्पत्ति को नहीं जानते, जहाँ दुःख सर्वांशतः शान्त हो जाता है और दुःख की शान्ति की ओर ले जानेवाले मार्ग को भी नहीं जानते हैं, वे चित्त-विमुक्ति और प्रज्ञा-विमुक्ति से वंचित हैं। वे दुःखों का अन्त करने में समर्थ नहीं, वे तो जन्म और बुढ़ापे में ही पड़े रहते हैं। किन्तु जो दुःख और दुःख की उत्पत्ति को जानते हैं, जहाँ दुःख सर्वांशतः शान्त हो जाता है और दुःख की शान्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को भी जानते हैं, वे चित्त-विमुक्ति और प्रज्ञा-विमुक्ति से युक्त हैं। वे दुःखों का अन्त करने में समर्थ हैं। वे जन्म और बुढ़ापे में नहीं पड़ते।"

५. उनका दर्शन भी लाभदायक है!

भिक्षुओ! जो भिक्षु शील, समाधि, प्रज्ञा, विमुक्ति और विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन से युक्त हैं, उपदेशक, (कर्म और कर्म-फल को) बतलाने वाले

दिखलाने वाले, ग्रहण करने वाले, उत्तेजित करनेवाले, सन्तोष देने वाले और सद्धर्म को अच्छी तरह कहनेवाले हैं, भिक्षुओ ! मैं उन भिक्षुओं का दर्शन भी बहुत लाभदायक कहता हूँ। श्रवण भी..., पास जाना भी...., संगति करना भी..., अनुस्मरण करना भी...., और उनका अनुगामी होकर प्रव्रजित हो जाना भी। सो किस कारण ? भिक्षुओ ! वैसे भिक्षुओं के सेवन, साथ और संगति से अपरिपूर्ण शील-स्कन्ध परिपूर्ण हो जाता है, अपरिपूर्ण समाधि-स्कन्ध..., अपरिपूर्ण प्रज्ञा-स्कन्ध...., अपरिपूर्ण विमुक्ति स्कन्ध...., और अपरिपूर्ण विमुक्ति ज्ञान-दर्शन-स्कन्ध ...। भिक्षुओ ! इस प्रकार के वे भिक्षु शास्ता भी कहे जाते हैं, सार्थवाह....रणंजह (= रागत्यागी) , अन्धकार-नाशक..., आलोक करने वाले..., प्रकाश करनेवाले..., प्रद्योत करनेवाले..., उल्काधारी .., प्रभङ्कर..., आर्य.... और चक्षुष्मान् भी कहे जाते है।

"जानकार, संयमी, धर्मपूर्वक जीवन-यापन करनेवाले आर्यों के लिये यह प्रमोद उत्पन्न करनेवाला होता है। वे प्रभङ्कर, आलोक करनेवाले, धीर, चक्षुष्मान्, राग-त्यागी, सद्धर्म को प्रकाशित करते और कहते हैं। जिनके धर्म को सुनकर अच्छी तरह जान, पण्डित लोग जन्म का क्षय कर फिर जन्म नहीं लेते।"

६. तृष्णा से ही चक्कर

भिक्षुओ ! ये चार तृष्णा की उत्पत्तियाँ हैं, जिसमें कि भिक्षु को तृष्णा उत्पन्न होते हुए उत्पन्न होती है। कौन चार ? भिक्षुओ ! भिक्षु को चीवर के लिए तृष्णा उत्पन्न होती है या पिण्ड-पात (= भोजन) के लिए...., या शयन-आसन के लिए..., या लाभ-हानि के लिए...। ...

"तृष्णा की दोस्तीवाला पुरुष चिरकाल से चक्कर काट रहा है। उत्पन्न होता और मरता है। वह संसार का अतिक्रमण नहीं कर पाता।

तृष्णा दुःख को पैदा करनेवाली है— इस प्रकार इसके दोषों को जान कर भिक्षु तृष्णा-रहित, अनासक्ति को छोड़, स्मृतिमान् हो विचरण करे।"

७. माता-पिता ही ब्रह्मा हैं

भिक्षुओ! वे कुल ब्रह्मा के साथ हैं, जिन पुत्रों के माता-पिता घर में पूजित हैं। भिक्षुओ! वे कुल पूर्व-देवों के साथ हैं..., भिक्षुओ! वे कुल पूर्व-आचार्यों के साथ हैं..., भिक्षुओ! वे कुल आह्वानीयों के साथ हैं जिन पुत्रों के माता-पिता घर में पूजित हैं। भिक्षुओ! 'ब्रह्मा' यह माता-पिता का ही नाम है। 'पूर्व-देवता...., 'पूर्व-आचार्य..., 'आह्वानीय' यह माता-पिता का ही नाम है। सो किस कारण? भिक्षुओ! माता-पिता पुत्रों के बहुत उपकारक हैं, पालन-पोषण करनेवाले हैं, इस लोक को (नाना प्रकार से) दिखलानेवाले हैं।

"माता-पिता (ही) ब्रह्मा, पूर्व-आचार्य, आह्वानीय और पुत्रों के अनुकम्पक कहे जाते हैं, इसलिए बुद्धिमान् पुरुष को चाहिए कि उनको नमस्कार एवं सत्कार करे। अन्न, पेय, वस्त्र, शयन, उबटन, स्नान और पैरों को धोने से उनकी सेवा करे। बुद्धिमान् पुरुष माता-पिता की उस सेवा से यहाँ भी प्रशंसित होता है और मरने पर स्वर्ग में भी प्रमोद करता है।"

८. परस्पर सहयोग से मुक्ति

भिक्षुओ! वे ब्राह्मण-गृहस्थ (=गृहपति) तुम्हारे बहुत उपकारक हैं, जो तुम्हारे लिए चीवर, पिण्डपात (= भोजन), शयन-आसन, ग्लान-प्रत्यय (=रोगीका पथ्य), भैषज्य (= दवा) और परिष्कारों (=काम में आनेवाली वस्तुओं) से सदा प्रस्तुत रहते हैं। भिक्षुओ!

तुम लोग भी ब्राह्मण-गृहस्थों के बहुत उपकारक हो, जो तुम लोग उन्हें आरम्भ, मध्य और अन्त में कल्याणकर धर्म का उसके शब्दों और भावों सहित उपदेश करके, सर्वांश में परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य को प्रकाशित करते हो। इस प्रकार भिक्षुओ! परस्पर के सहयोग से संसार-रूपी बाढ़ को पार करने और भली प्रकार दुःख का अन्त करने के लिए ब्रह्मचर्य पालन किया जाता है।

"घरबारी (=गृहस्थ) और बेघरबारी (=प्रव्रजित) दोनों एक दूसरे के सहारे परम कल्याणकारक सर्वोत्तम सद्धर्म का पालन करते हैं। प्रव्रजित पीड़ा को दूर करने के लिए गृहस्थों से चीवर, (=भोजन और भैषज्य) और शयन-आसन पाते हैं। घरबारी गृहस्थ तथागत के सहारे आर्य-प्रजा के ध्यानी अर्हन्तों का विश्वास करते स्वर्गगामी मार्ग पर चलते धर्म का पालन कर देवलोक में आनन्द करते हैं और चाहे हुए को पाकर प्रमोद करते हैं।"

९. वे बुद्ध को चाहने वाले हैं

भिक्षुओ! जो कोई भिक्षु धूर्त, क्रोधी, बातूनी, चालाक, घमण्डी एकाग्रता-रहित हैं, भिक्षुओ! वे भिक्षु मुझे चाहनेवाले नहीं हैं। भिक्षुओ! वे भिक्षु इस धर्म-विनय से बाहर हैं। भिक्षुओ! वे भिक्षु इस धर्म-विनय में वृद्धि, विरूढ़ि और विपुल-भाव को नहीं प्राप्त होते हैं। और भिक्षुओ! जो कोई भिक्षु धूर्त नहीं हैं, क्रोधी नहीं हैं, बातूनी नहीं हैं, धीर हैं, और एकाग्र-चित्त वाले हैं, भिक्षुओ! वे भिक्षु मुझे चाहनेवाले हैं। भिक्षुओ! वे भिक्षु इस धर्म-विनय से बाहर नहीं हैं, भिक्षुओ! वे भिक्षु इस धर्म-विनय में वृद्धि, विरूढ़ि और विपुल-भाव को प्राप्त होते हैं।

"जो धूर्त, क्रोधी, बातूनी, चालाक, घमण्डी और एकाग्रता-रहित

हैं, वे सम्यक् सम्बुद्ध द्वारा कहे गये धर्म में उन्नति नहीं कर पाते। जो धूर्त नहीं हैं, बातूनी नहीं हैं, धीर हैं, क्रोध-रहित हैं और एकाग्र-चित्त वाले हैं, वे सम्यक् सम्बुद्ध द्वारा कहे गये धर्म में उन्नति करते हैं।"

१०. पार गया व्यक्ति

जैसे भिक्षुओ ! कोई पुरुष बड़े प्रेम और आनन्द से नदी की धार में बहे, तब कोई किनारे खड़ा हुआ आँख वाला आदमी उसे देखकर ऐसा कहे—'हे पुरुष ! भले ही तू प्रेम और आनन्द से नदी की धार में बह रहे हो, किन्तु यहाँ नीचे की ओर लहर, भँवर, मगर और राक्षस वाला कुण्ड है, हे पुरुष ! जहाँ तू पहुँचकर मर जाओगे या मरने के समान दुःख पाओगे।' भिक्षुओ ! तब वह पुरुष उस पुरुष की बात सुनकर हाथों और पैरों से ऊपर की ओर (= उल्टी धार) जाने का प्रयत्न करे। भिक्षुओ ! बात को समझाने के लिए मैंने यह उपमा कही है। यह अर्थ है—भिक्षुओ ! 'नदी की धारा' यह छः भीतरी आयतनों (= चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काय और मन) का नाम है। भिक्षुओ ! 'नीचे की ओर कुण्ड' यह पाँच अवर-भागीय संयोजनों (= सत्काय दृष्टि, विचिकित्सा, शीलव्रत-परामर्श, कामराग और व्यापाद) का नाम है। भिक्षुओ ! 'लहर' यह क्रोध और परेशानी का नाम है। भिक्षुओ ! 'भँवर' यह पाँच कामगुणों(= पाँचों इन्द्रियों से सम्बन्धित काम-वासनायें) का नाम है। भिक्षुओ ! 'मगर और राक्षस' यह स्त्री का नाम है। भिक्षुओ ! 'उल्टी धार' नैष्काम्य (= निष्कामता) का नाम है। भिक्षुओ ! हाथों और पैरों से प्रयत्न करना' यह दृढ़ उद्योग का नाम है। भिक्षुओ ! किनारे खड़ा हुआ आँखवाला आदमी' यह तथागत अर्हत् सम्बुद्ध का नाम है।

"सचेत और मुक्त-चित्त वाला आगे निर्वाण की कामना करते हुए यदि दुःख के साथ भी काम-भोगों को छोड़ देता है, तो वह (मार्ग-फल की प्राप्ति के साथ ही) वहाँ विमुक्ति पा लेता है। वह ज्ञानी, ब्रह्मचर्य-वास किया हुआ, लोक का अन्त-कर्त्ता और पार गया हुआ कहा जाता है।"

११. निर्वाण कौन पाता है ?

भिक्षुओ ! यदि चलते हुए भी भिक्षुको काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क या विहिंसा-वितर्क उत्पन्न होता है, और भिक्षुओ ! भिक्षु उसे स्वीकार करता है, नहीं छोड़ता है, नहीं हटाता है, नहीं निकालता है, नहीं मिटा देता है, तो भिक्षुओ ! चलते हुए भी ऐसा भिक्षु अ-परिश्रमी, अ-संकोची, एकदम आलसी और उद्योग-रहित कहा जाता है। भिक्षुओ ! यदि खड़े हुए भी...., बैठे हुए भी..., लेटकर जागते हुए भी ..।

भिक्षुओ ! यदि चलते हुए भी भिक्षु को काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क या विहिंसा-वितर्क उत्पन्न होता है और भिक्षुओ ! भिक्षु उसे नहीं स्वीकार करता है, छोड़ देता है, हटा देता है, मिटा देताहै तो भिक्षुओ ! चलते हुए भी ऐसा भिक्षु परिश्रमी, संकोची, सदा उद्योगशील, और संयमी कहा जाता है। भिक्षुओ ! यदि खड़े हुए भी···, बैठे हुए भी..., लेटकर जागते हुए भी....।

"जो चलते, खड़े, बैठे अथवा सोये काम-भोग सम्बन्धी बुरे वितर्क करता है, बुरे मार्ग पर चलने वाला मोहित करने वाली चीजों में मूर्छित ऐसा भिक्षु उत्तम सम्बोधि को प्राप्त करने के योग्य नहीं। जो चलते, खड़े, बैठे अथवा सोये वितर्क को शान्त कर वितर्क के शमन में लगा रहता है, वैसा भिक्षु उत्तम सम्बोधि को प्राप्त करने के योग्य है।"

१२. शील से युक्त होकर विहरो

भिक्षुओ ! शील से युक्त होकर विहरो, प्रातिमोक्ष से युक्त हो प्रातिमोक्ष-संयम का भली प्रकार पालन करते विहरो, आचार-गोचर से युक्त हो अल्पमात्र के दोषों में भी भय देखते शिक्षा-पदों को पालन करने का अभ्यास करो। भिक्षुओ ! शील और प्रातिमोक्ष से युक्त हो, प्रातिमोक्ष-संयम का भली प्रकार पालन करते विहरते, आचार-गोचर से युक्त हो अल्पमात्र के दोषों में भी भय देखते शिक्षा-पदों को पालन करने का अभ्यास करते भिक्षुओ ! आगे क्या करणीय है ? भिक्षुओ ! चलते हुए भी भिक्षु का लोभ दूर हो गया होता है, व्यापाद...., स्त्यान-मृद्ध (=मानसिक और शारीरिक आलस्य) ..., औद्धत्य (= चंचलता)-कौकृत्य (= पछतावा)...., और विचिकित्सा (= सन्देह) । उद्योग करने में लगा होता है, स्मृति उपस्थित होती है, शरीर पीड़ा-रहित शान्त होता है और चित्त एकाग्रता-प्राप्त होता है, तो भिक्षुओ ! चलते हुए भी ऐसा भिक्षु परिश्रमी, संकोची, सदा उद्योगशील और सयमी कहा जाता है। भिक्षुओ ! यदि खड़े हुए भी ·· ,बैठे हुए भी····,लेटकर जागते हुए भी·· ।

"यत्नपूर्वक चले, यत्नपूर्वक खड़ा हो, यत्नपूर्वक बैठे, यत्नपूर्वक लेटे। भिक्षु यत्नपूर्वक सिकोड़े और यत्नपूर्वक पसारे। ऊपर, नीचे, तिरछे जहाँ तक संसार की गति है, वहाँ तक सभी धर्मों और स्कन्धों की उत्पत्ति और लय को देखनेवाला होकर विहरे। इस प्रकार विहरनेवाले, उद्योगी, शान्त, चंचलता-रहित, सदा स्मृतिमान्, चित्त की उचित शान्ति के अभ्यास करने में लगे हुये वैसे भिक्षु को सदा संयमी (= निर्वाण प्राप्त) कहते हैं।"

१३. बुद्ध 'तथागत' क्यों कहलाते हैं ?

भिक्षुओ ! संसार तथागत से जान लिया गया है, तथागत संसार से अलग हैं। भिक्षुओ ! संसार की उत्पत्ति तथागत से जान ली गई है,

संसार की उत्पत्ति तथागत से दूर हो गई है। भिक्षुओ ! संसार का शान्त होना तथागत से जान लिया गया है, तथागत ने संसार की शान्ति का साक्षात्कार कर लिया है। भिक्षुओ ! संसार के शान्त होने की ओर ले आनेवाला मार्ग तथागत से जान लिया गया है, तथागत ने संसार की शान्ति की ओर ले जानेवाले मार्ग की भावना करली है।

भिक्षुओ ! जो देवताओं के साथ संसार में मार, ब्रह्मा और श्रमण-ब्राह्मणों-सहित देवताओं और मनुष्यों से देखा, सुना, अनुभव किया, जाना गया, प्राप्त किया, खोजा गया और मन से विचार किया गया है, चूँकि वह तथागत से जान लिया गया है, इसलिए "तथागत" कहे जाते हैं।

भिक्षुओ ! जिस रात तथागत अनुत्तर सम्यक् सम्बोधि (=बुद्धत्व) को प्राप्त करते हैं और जिस रात अनुपादिशेष निर्वाण-धातु से परिनिर्वाण को प्राप्त होते हैं, इसके बीच जो कहते हैं, बोलते हैं, निर्देश करते हैं, वह सब वैसा ही होता है, अन्यथा नहीं, इसलिए 'तथागत' कहे जाते हैं।

भिक्षुओ ! तथागत जैसा कहते हैं, वैसा करने वाले हैं, तथागत जैसा करते हैं, वैसा कहते हैं। इस प्रकार यथावादी तथाकारी और यथाकारी तथावादी हैं, इसलिए 'तथागत' कहे जाते हैं।

भिक्षुओ ! देवताओं के साथ संसार में मार, ब्रह्मा, श्रमण-ब्राह्मणों सहित देवताओं और मनुष्यों में तथागत अभिभू, अजित, सर्वद्रष्टा, वशवर्ती हैं, इसलिए 'तथागत' कहे जाते हैं।....

"सारे संसार को जानकर, सारे संसार में यथार्थ रूपसे,
सारे संसार से अलग, सारे संसार में अनुपम;
सबमें अभिभू, धीर, सारी ग्रन्थियों को खोलकर,
(जो) निर्भय परम शान्ति निर्वाण को पा लिए हैं,
यह क्षीणाश्रव बुद्ध हैं, निष्पाप और संशय-रहित,

सब कर्मों को क्षयकर सांसारिक आसक्तियोंको नष्ट कर विमुक्त हैं।
यह भगवान् बुद्ध हैं, यह अनुत्तर सिंह हैं,
जिन्होंने देवताओं-सहित संसार में ब्रह्मचक्र चलाया ॥
देवता और मनुष्य जो ऐसे बुद्ध की शरण गए हैं,
वे एकत्र हो उन महान् निर्भयको नमस्कार करते हैं।
"दमन करने वलों में दान्त श्रेष्ठ है, और शमन करनेवालों में
शान्त ऋषि,
मुक्त करने वालों में मुक्त हुआ अग्र है, तारने वालों में
तर गया श्रेष्ठ है ॥"
वे इस प्रकार महान् निर्भय (तथागत) को नमस्कार करते हैं—
"देवताओं-सहित संसार में आप अद्वितीय हैं।"

इतिवुत्तक समाप्त

टिप्पणी

१. अनागामी—दस संयोजन हैं। पाँच नीचे वाले और पाँच ऊपर वाले। जो व्यक्ति नीचे के पाँच संयोजनों को दूर करके ही मर जाता है, वह शुद्धावास ब्रह्मलोक में पैदा होता है और वहीं ऊपरी पाँच संयोजन रूपराग, अरूपराग, मान, औद्धत्य और अविद्या को दूर कर परिनिर्वाण को प्राप्त हो जाता है। वह फिर कभी इस संसार में लौटकर नहीं आता। ऐसे ही व्यक्ति को अनागामी कहते हैं। यह ज्ञान-गवेषी अर्थात् शैक्षों की तीसरी अवस्था है। इसके पश्चात् ज्ञान-गवेषी 'अर्हत्व' प्राप्त कर जीवन्मुक्त हो जाता है। जो व्यक्ति अनागामी होता है, वह फिर कभी च्युत होगा—ऐसा सम्भव नहीं।

२. शैक्ष्य—ज्ञान के दृष्टिकोण से मनुष्यों का वर्गीकरण तीन प्रकार का होता है—(१) जो ज्ञान नहीं प्राप्त हैं उन्हें पृथक्जन कहते हैं। (२) जिन्होंने ज्ञान के कुछ अंश को प्राप्त कर लिया है और कुछ अंश प्राप्त करने को शेष हैं, उन्हें शैक्ष्य कहते हैं। वस्तुतः स्रोतापन्न, सकृदागामी और अनागामी का यह नाम है। (३) अर्हत्व-प्राप्त व्यक्ति को अ-शैक्ष्य कहते हैं, क्योंकि उसे संसार में कुछ भी सीखने के लिए शेष नहीं रहता है।

३. संवर्त—यह एक कल्प का नाम है। प्रलय होने को ही संवर्त-कल्प कहते हैं। संसार का प्रलय सात बार अग्नि से होता है। आठवीं

बार पानी से और जब इस तरह चौंसठ बार पूरे हो जाते हैं, तब पैंसठवीं बार वायु से प्रलय होता है। बौद्धधर्म के अनुसार प्रलय अथवा संवर्त-कल्प का यही क्रम सदा रहता है।

४. **विवर्त**—संवर्त-कल्प के पश्चात् जब तक प्रलय का ही दृश्य बना रहता है, उसे संवर्त-स्थायी-कल्प कहते हैं। उसके पश्चात् जब सृष्टि प्रारम्भ होती है, आभास्वर ब्रह्मलोक से च्युत होकर सत्व आने लगते हैं और धीरे-धीरे रसापृथ्वी आदि का निर्माण प्रारम्भ होता है, तो उसे ही विवर्त-काल कहते हैं। सृष्टि-काल का ही यह नाम है।

५. **आभास्वर**—प्रथम ध्यान को प्राप्त व्यक्ति प्रथम ध्यान की भूमिवाले ब्रह्मलोक में उत्पन्न होते हैं। प्रथम-ध्यान की भूमि वाला ब्रह्म-लोक तीन प्रकार का होता है—परित्ताभ (= अल्प प्रकाश वाला), अप्पमाणाभ (= असीमित प्रकाश वाला) और आभास्वर। आभास्वर ब्रह्मलोक में उत्पन्न ब्रह्मा के शरीर से मशाल से लपट निकलने की भाँति सदा प्रकाश निकलता रहता है, अथवा चारों दिशाओं में फैलता रहता है, इसीलिए उस ब्रह्मलोक को आभास्वर कहते हैं। सृष्टि के प्रारम्भ में वहीं से च्युत होकर सत्व शून्य ब्रह्म-विमान में आते हैं और रसा-पृथ्वी के उत्पन्न होने पर उसका सेवन करते हुए क्रमशः पृथ्वी के निर्माण हो जाने पर उस पर उतरते हैं तथा मानव-जाति की नव-रचना अथवा नया अध्याय प्रारम्भ होता है।

६. **वैपुल्य पहाड़**—यह पटना जिले में स्थित राजगिरि (राज-गृह) के एक प्राचीन पर्वत का नाम है। आज भी इसे राजगिरिवासी विपुलागिरि नाम से पुकारते हैं।

७. **आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग**—मध्यम मार्ग को ही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग कहते हैं। निर्वाण प्राप्त करने के लिए जो आर्य मार्ग है, उसके आठ अंग (= भाग) हैं, इसलिए वह आर्य अष्टाङ्गिक कहा जाता है। वे आठ

अंग ये हैं—(१) सम्यक् दृष्टि (२) सम्यक् संकल्प (३) सम्यक् वाणी (४) सम्यक् कर्मान्त (५) सम्यक् आजीविका (६) सम्यक् व्यायाम (७) सम्यक् स्मृति और (८) सम्यक् समाधि। इन अंगों में पहले के दो ज्ञान (प्रज्ञा) सम्बन्धी हैं, बीच के चार आचार सम्बन्धी (शील) हैं और अन्तिम दो योग (समाधि) सम्बन्धी हैं।

८. चार आर्य सत्य—दुःख, दुःख-समुदय, दुख-निरोध और दुःख निरोधगामी प्रतिपद्—इन्हें चार आर्य सत्य कहते हैं।

९. निर्वाण—परम सुख मोक्ष का ही नाम निर्वाण है। राग, द्वेष, मोह का क्षय ही निर्वाण है। यह दो प्रकार का होता है—उपादिशेष निर्वाण तथा अनुपादिशेष निर्वाण। उपादिशेष निर्वाण क्लेशों का नाश कर जीवित रहते ही प्राप्त होता है, जैसा कि भगवान् बुद्ध ने बोधिवृक्ष के नीचे प्राप्त किया था। अनुपादिशेष निर्वाण परिनिर्वाण होने (शरीर छूटने) पर प्राप्त होता है। अर्हत् का पञ्चस्कन्ध छूटना ही अनुपादिशेष निर्वाण है, जैसा कि तथागत ने कुशीनारा में जोड़े शालवृक्षों के नीचे प्राप्त किया था।

१०. अभिज्ञा—इसका अर्थ है विशेष ज्ञान। विशेष ज्ञान छः हैं—(१) ऋद्धिविध ज्ञान (२) दिव्य श्रोत्र ज्ञान (३) चेतोपरिय ज्ञान (४) पूर्वनिवास ज्ञान (५) दिव्य चक्षु और (६) आश्रव-क्षय ज्ञान। इन्हें ही 'अभिज्ञा' कहते हैं। किन्तु, ग्रन्थ में इस स्थल पर इनसे तात्पर्य नहीं है, प्रत्युत यहाँ इसका अर्थ है—"स्कन्ध आदि बातों को विशेष ज्ञान से ठीक-ठीक जानना।"

११. परिज्ञा—त्रिलोकी की सभी बातों को 'यह दुःख है' जानकर उसे छोड़ देना—इस शब्द का अर्थ है।

१२. आश्रव—कामाश्रव, भवाश्रव, दृष्टाश्रव और अविद्याश्रव—ये चार आश्रव हैं। पाँच कामगुण सम्बन्धी राग कामाश्रव है। रूप और

अरूप भवों में उत्पन्न होने का छन्द-राग, ध्यान की इच्छा, शाश्वत दृष्टि सहगत उत्पन्न राग, भावों के लिए प्रार्थना भवाश्रव है। पूर्वान्त-अपरान्त वाली बासठ प्रकार की दृष्टियाँ दृष्टाश्रव है। दुःख, दुःख समुदय, दुःख निरोध और दुःख निरोध गामिनी प्रतिपदा, पूर्वान्त, अपरान्त, पूर्वापरान्त तथा प्रतीत्यसमुत्पाद—इन आठ बातों के अज्ञान को अविद्याश्रव कहते हैं। ये चारों आश्रव अर्हत् में नहीं होते, इसलिए वे आश्रव-मुक्त कहे जाते हैं।

१३. पञ्चस्कन्ध—व्यक्ति मानसिक और शारीरिक—इन दो अवस्थाओं का पुञ्ज है, उन्हें नाम और रूप कहते हैं। जो कुछ सूक्ष्म पुञ्ज है, वह सब नाम है और जो स्थूल है, वह सब रूप। वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान ये नाम की चार अवस्थायें हैं और शेष रूप है। इस प्रकार व्यक्ति की अवस्थाओं के साधारणतः पाँच पुञ्ज दीख पड़ते हैं, उन्हें ही पञ्चस्कन्ध कहते हैं।

१४. बोधि-पाक्षिक धर्म—चार स्मृति प्रस्थान, चार सम्यक् प्रधान, चार ऋद्धिपाद, पाँच इन्द्रिय, पाँच बल, सात बोध्यङ्ग, आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग—यही ३७ बोधिपाक्षिक धर्म हैं और वस्तुतः संक्षेप में यही बौद्धधर्म है।

१५. अवीचि नरक—इसे ही महा-नरक भी कहते हैं। इसमें सदा आग की लपटें एक समान उठा करती हैं, कभी भी लपटों से वह नरक खाली नहीं होता है, इसीलिए इसे अवीचि नरक कहते हैं। अट्ठकथा (पपञ्च-सूदनी १२०) में कहा गया है कि वह नरक सौ योजन लम्बा और सौ योजन चौड़ा है। इसका धरातल एवं छत सब लौहमय है। इसकी भित्तियों से सदा लपटें उठकर चारों ओर एक जैसी फैला करती हैं।

१६. **प्रातिमोक्ष**—भिक्षु-भिक्षुणियों के परिपालनीय नियमों के संग्रह का नाम 'प्रातिमोक्ष' है। भिक्षु-प्रातिमोक्ष और भिक्षुणी प्रातिमोक्ष—यह दो भागों में विभक्त है। भिक्षु-प्रातिमोक्ष में २२७ और भिक्षुणी-प्रातिमोक्ष में ३११ नियम हैं। प्रत्येक भिक्षु से आशा की जाती है कि वह अपने लिए निर्दिष्ट इन नियमों का पालन करेगा।

महाबोधि सभा के अन्य प्रकाशन

१. मज्झिम निकाय	....	८)
२. दीघ निकाय	....	६)
३. विनय पिटक	...	८)
४. संयुत्त निकाय भाग १	....	७)
५. ,, ,, भाग २	....	६)
६. उदान	....	१।)
७. बुद्ध कीर्तन	....	२)
८. बौद्ध शिशु-बोध	...	।)
९. भगवान् हमारे गौतम बुद्ध (कविता)	....	‍-)
१०. कुशीनगर का इतिहास	....	२)
११. कुशीनगर दिग्दर्शन	....	।)
१२. महावंसो	....	।।)
१३. पूर्णिमा	....	।।=)
१४. बोधिद्रुम	...	।=)
१५. सरल पालि-शिक्षा	....	१।।)
१६. धम्मपद	...	१।।)
१७. बौद्ध-चर्य्या-पद्धति	....	१।।)
१८. सुत्तनिपात	....	२।।)
१९. पालि महाव्याकरण	....	५।।)
२०. खुद्दक पाठ	....	।)
२१. तेलकटाह गाथा	...	।)
२२. तथागत का प्रथम उपदेश	...	।)

प्राप्ति स्थान :—

महाबोधि पुस्तक-भण्डार, सारनाथ, बनारस।